श्रीजिनाय नमः

देव द्रव्य निर्णयः

(प्रथम विभाग)

देव द्रव्यका शास्त्रार्थ संबंधी पत्र व्यवहार

और

संक्षेपमें देव द्रव्यका साररूप निर्णय.

कर्त्ताः—

परमपूज्य परमगुरु श्रीमन्महोपाध्यायजी श्री १००८ श्री सुमति सागरजी महाराज के लघु शिष्य

पं० मुनि-श्रीमणिसागरजी महाराज.

छपवाकर प्रकट कर्त्ताः—

श्री इन्दौर व उज्जैन के संघकी द्रव्य सहायतासे श्री जिनदत्त सूरिजी ज्ञानभंडारके कार्य वाहक गोपीपुरा शीतलवाडी सुरत, और श्रीजिनकृपाचंद्र सूरिजी ज्ञानभंडार के कार्यवाहक नया जैन मंदिर इन्दौर.

श्रीवीरनिर्वाण २४४६, विक्रम संवत १९७६ फागण सुदी १५.

श्रीलक्ष्मी-विलास स्टीम प्रेस, इन्दौर में मुद्रित.

प्रथम बार ३००० कॉपी भेट मूल्य सत्यग्रहण.

जाहिर खबर.

बृहत्पर्युषणा निर्णयः

इसग्रंथमें वीरप्रभुके गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणक को मानने में शंका करनेवालोंकी सब शंकाओंका समाधान सहित तथा अभी कई साधु लोग पर्युषणा के व्याख्यान में उसका निषेध करते हैं, उन्होंकी सब कुयुक्तियोंका खुलासा सहित आगमपाठानुसार व वडगच्छादी प्राचीन, सबगच्छोंके पूर्वाचार्यों के रचे ग्रंथानुसार अच्छीतरहसे कल्याणक माननेका सिद्धकरके बतलाया है. और लौकिकटिप्पणामें जैसे कभी कार्तिकादि क्षयमहिनेआतेहैं, तब उन्हों में दीवाली-ज्ञानपंचमी-कार्तिकचौमासी-कार्तिकपूर्णिमा–पौषदशमी वगैरह धर्मकार्य करने में आते हैं तैसेही श्रावणादि अधिक महिनो में भी पर्युषणादि पर्वके धर्मकार्य करनेमें कोई दोष नहीं है, इस विषय में भी पर्युषणाके बाद १०० दिन तक ठहरने वगैरह सब शंकाओंका समाधान सहित प्राचीन शास्त्रोंके प्रमाणोंके साथ विस्तार पूर्वक निर्णय लिखा है. और हरिभद्रसूरिजी-हेमचंद्राचार्यजी नवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी-देवेन्द्रसूरिजी-उमास्वातिवाचक-जिनदासगणिमहत्तराचार्य वगैरह सबगच्छों के प्राचीनाचार्यों के रचे ग्रंथानुसार श्रावक को सामायिक करने में पहिले करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका साबित करके बतलाया है. उसी मुजब आत्मार्थी भव्यजीवोंको सामायिकादि धर्मकार्य करनेसे जिनाज्ञा की आराधना हो सकती है, इसका भी अच्छी तरहसे निर्णय किया है. इन सब बातोंका खुलासा देखना चाहते हो तो "**बृहत्पर्युषणा निर्णयः**" ग्रंथ भेट मिलता है उसको मंगवाकर देखो, डाक खर्च के नव आने लगेंगे, देवद्रव्य निर्णय के प्रकाशकों के ठिकानेसे मिलेगा.

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

देवद्रव्यका शास्त्रार्थसंबंधी पत्रव्यवहार और संक्षेप में देवद्रव्यका साररूप निर्णय।

मंदिर में श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की पूजा आरती करने संबंधी बोलीके चढावे का द्रव्य भगवान् को अर्पण होता है, इसलिये वह द्रव्य भगवान् की भक्ति के सिवाय अन्य जगह नहीं लग सकता. जिसपर भी उस द्रव्यको अभी साधारण खाते में लेजाने संबंधी श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी की नवीन प्ररूपणारूप यह देवद्रव्यकी चर्चाने जैन समाज में बहुत विरोध भाव फैलाया है, हजारों लोग संशय में गिरे हैं, लाखों रुपयोंकी देवद्रव्यकी आवक को बडा भारी धक्का पहुंचा है, इस विषय का पूरापूरा समाधान पूर्वक निर्णय होनेके लिये बहुत लोग उत्कंठित हो रहे हैं, इस नवीन प्ररूपणाकी चर्चा संबंधी श्रीमान्-विजयकमलसूरिजी आनन्दसागर सूरिजी वगैरह अनुमान डेढ सौ दो सौ मुनिजन सामने हुए थे, मगर न्यायपूर्वक शांतिसे अभीतक उसका निर्णय होकर समाज का पूरापूरा समाधान नहीं हो सका और आपस में छापाछापी से हजारोंका खर्चा हो गया, निंदा, ईर्षासे क्लेश बढ गया, लोगोंके कर्मबंधन बहुत हुए, और शासनकी हीलनाभी हुई, कुछ सार निकला नहीं। इधर श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी की तरफ से गये आसोज महिने के जैनपत्र में इस विषयके शास्त्रार्थ करनेकी जाहिर सूचना प्रकट हुई थी, मगर उनके सामने कोईभी साधु शास्त्रार्थ करने को खडा नहीं हुआ. उससे समाजमें बडी भारी खलभली मची, लोगोंकी शंकाने विशेष जोर किया और भविष्यमें

शासन को बडी भारी हानि पहुंचने का कारण हुआ, इधर उन लोगोंको बोलने का मोका मिला कि हमतो शास्त्रार्थ करने के लिये तैयार थे मगर हमारे सामने पक्षवालोंमें से कोईभी साधु खडा नहीं हो सका. इत्यादि व्यवस्थाको देखकर मैंने शास्त्रार्थ करनेका मंजूर किया और उनको पत्र भेजा, उसकी नकल नीचे मुजब है:—

शास्त्रार्थ मंजूर.

श्रीमान्-विजय धर्मसूरिजी ! अमदाबाद, बडौदा, सुरत, मुंबई, रतलाम, इन्दोर, धूलिया, वगैरह आप जहां चाहे वहां देवद्रव्य संबंधी विवादवाले विषयका शास्त्रार्थ करनेको मैं तैयार हूं. संवत्१९७८ कार्तिक शुदी १०, मुनि-**मणिसागर**, ठेः-कोटेवाले शेठजीकी हवेली **रतलाम.**

यही लेख जैन पत्रके अंक ४४ वें में और महावीर पत्रके अंक १५ वें में छपकर प्रकट हो चुकाथा, उसके जवाब में धूलियासे श्रीमान् विजयधर्मसूरिजी की तरफसे विद्याविजयजीने जैन पत्रके अंक ४५ वें में छपवाया था कि 'तुम इन्दोर आवो तुमारे साथ शास्त्रार्थ करने को हमारी तर्फ से कोई भी साधु खडा होगा.'

इस प्रकार से छपवाकर उन्होंने शास्त्रार्थ के लिये इन्दोर शहर पसंद किया और मेरे साथ शास्त्रार्थ करने का स्वीकार करके मेरेको मौनएकादशीके लगभग इन्दोर शास्त्रार्थके लिये बुलवाया, इसके जवाब में मैंने उनको पत्र लिखा उसकी नकल नीचे मुजब है.

इन्दोर में शास्त्रार्थ.

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी--देवद्रव्यसंबंधी विवाद आपने ही उठाया है. १-२-३-४ पत्रिकाएं भी आपने ही लिखी हैं, इसलिये इस विवादके शास्त्रार्थ संबंधी कोईभी लेख आपकी सही बिना प्रमाणभूत माना जावेगा नहीं. यदि आप अन्य किसी को शास्त्रार्थ के लिये खडा करना चाहते

होवें तो भी मेरेको कोई हरकत नहीं है, मगर सभा में जो सत्य निर्णय ठहरे सो उसी समय आपको स्वीकार करना पडेगा और जिसकी प्ररूपणा झूठी ठहरे उसको उसी समय संघ समक्ष सभामें अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं देना पडेगा. यह दोनों बातें अगर आपको मंजूर हो तो अपनी सहीसे सूचना दीजिये, यहांपर मौनेकादशीको उपधानकी माला का महोत्सव व दीक्षा होनेवाली है, सो होने बाद मैं इन्दोर तरफ आने को तैयार हूं. पहिले प्रतिज्ञा होनी चाहिये पीछे शास्त्रार्थ का दिवस मुकर्रर होनेसे अन्य मुनि महाराज भी पधारने का संभव है

संवत् १९७८ मागसर वदी ८. — मुनि-**मणिसागर, रतलाम.**

उपर मुजब पत्र रजीष्टरी से धूलिये भेजा था, वो विहार करके सीरपुर होकर मांडवगढ आनेवाले सुना था, इसलिये सीरपुर और मांडवगढभी इस पत्र की नकल रजीष्टरी से भेजी गई थी, तीनों जगह के रजीष्टर पत्र उन्होंको मिल गये उनकी पहुंचे आगई है और यही पत्र महावीर पत्र के अंक १६ वें में और जैन पत्र के अंक ४७ वें में छपकर प्रकट भी हो चुका है.

और रतलाम में उपधान तप की माला पहिरने का तथा 'मालवा जैन समाज सम्मेलन' का महोत्सव था, उसपर इन्दोर से स्वयंसेवक मंडल भी आया था उनके साथ इन्दोर श्रीमान् प्रतापमुनिजी को अनुक्रम से दो पत्र भेजे; उन्हों की नकल नीचे मुजब है.

प्रथम पत्रकी नकल.

श्रीमान् प्रतापमुनिजी योग्य अनुवंदना सुखशाता वंचना. महावीर पत्रके अंक १६ वें में लेख मेरी तरफ से छपा है उसमुजब श्रीविजय धर्म सूरिजी इन्दोर आवें तब उनके पाससे सही भिजवाना, मैं इन्दोर आनेको तैयार हूं. सं० १९७८ मागसर सुदी ११, मुनि **मणिसागर, रतलाम.**

यह प्रथम पत्र हीरालालजी जिन्दाणी, पंचमलालजी बोरा, गेंदालालजी डोसी, माणकचंदजी राठोड, कनैयालालजी रांका, मांगीलालजी कटारीया और अमोलकचंदभाई के साथ भेजा था.

दूसरे पत्रकी नकल.

श्रीमान् प्रताप मुनिजी योग्य अनुवंदना सुखशाता बंचना. श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी इन्दोर आवें तब शास्त्रार्थ में सत्य ग्रहण करवाने की सही जलदी से भिजवाना, सही आनेसे मैं रतलाम से इन्दोर ५-६ रोजमें पहुंच सकूंगा, आप वहां ही ठहरना. सही बिना शास्त्रार्थ होता नहीं, कमजोर को सही करना मुश्किल होता है इसलिये अन्य बातों में विषयांतर करता है, यह तो आप जानते ही हैं, विशेष क्या लिखें. संवत् १९७८ मागसर शुदी १२, मुनि-**मणिसागर, रतलाम.**

यह दूसरा पत्र धनराजजी और जुहारमलजी रांका के साथ भेजा था, यह उपर के दोनों पत्र श्रीप्रतापमुनिजी मार्फत इन्दोर आये तब उन्होंको पहुंचाये गये, जिसपरभी " मणिसागर की शास्त्रार्थ करने की इच्छा नहीं है, इसलिये इन्दोर नहीं आता" इत्यादि झूठी झूठी बातें मेरे लिये फैलाई. तब मैंने एक हेंडबिल छपवाया था, वह नीचे मुजब है.

देवद्रव्य संबंधी इन्दोर में शास्त्रार्थ.

श्रीमान्–विजयधर्म सूरिजी ! मेरी तर्फ से महावीर पत्र के अंक १६ वे में और जैन पत्रके अंक ४७ में लेख छपा है, उस मुजब देव द्रव्य संबंधी शास्त्रार्थ की सभा में जो सत्य निर्णय ठहरे सो उसी समय अंगीकार करने की व जिसकी प्ररूपणा झूठी ठहरे उसको उसी समय सभा में मिच्छामि दुक्कडं देने की आप प्रतिज्ञा करिये, मैं इन्दोर शास्त्रार्थ के लिये आने को तैयार हूं. यह बात धूलिया, सीरपुर और मांडवगढ के रजीष्टर पत्रों में आप को लिख चुका हूं और महावीर व जैनपत्र में भी

छप चुकी है, इसलिये मणिसागर की शास्त्रार्थ करने की इच्छा नहीं है उससे इन्दोर नहीं आता इत्यादि बातें करना सब झूठ है।

यह विवाद आपनेही उठाकर जैन समाज में चर्चा फैलायी है, उस से हजारों लोग संशय में गिरे हैं, और देव द्रव्य में बडी भारी हानि पहुंचने का कारण हुआ है, इसलिये इस शास्त्रार्थ में आपकी सही बिना कोई भी लेख प्रमाणभूत माना जावेगा नहीं, और इसके लिये आपको जियादे भी ठहरना पडेगा मगर विहार करने के बहाने शास्त्रार्थ को उडा सकते नहीं. विहार तो जन्मभर करना ही है धर्मकार्य के लिये जियादा ठहरने में भी कोई दोष नहीं हैं.

आपकी प्रतिज्ञा पत्र में सही होनेपर शास्त्रार्थ का दिवस मुकरर होनेसे बहुत साधु-श्रावक इस शास्त्रार्थ में शामिल होने के लिये इन्दौर आने को तैयार हैं, इसलिये अगर अपनी बात सच्ची समझते हो तो सही करने में कभी विलंब न करेंगे या झूठी समझ करके भी अपनी बात जमाने के लिये उपर से हां हां करते हो और अंदर से इच्छा न होनेपर झूठे झूठे बहाने बतलाकर शास्त्रार्थ से पीछे हटना चाहते हो तो अपनी प्ररूपणाको पीछी खींच लेनाही योग्य है, नहीं तो सही करिये. यह विवाद सामान्य नहीं है, इसलिये सहीपूर्वक न्यायसेंही होना चाहिये. इति शुभम्। सं० १९७८ पौष वदी ३. मुनि-**मणिसागर, रतलाम.**

इस हेंडबिल को रजीष्टरी से उन्होंको भेजा गया था (उसकी पहुंच आगई थी), और इन्दोर, रतलाम वगैरह शहरों में भी बांटा गया था, उसपर भी उन्होंने इस हेंडबिल का कुछ भी जवाब नहीं दिया मौन कर लिया और धूलिया, सीरपुर, मांडवगढ के तीनों पत्रों में, व श्री प्रतापमुनिजी वाले दो पत्रों में और उपर के हेंडबिल में साफ खुलासा लिखा गया था, कि "शास्त्रार्थ की सभा में सत्यग्रहण करने

की और झूठ का मिच्छामि दुक्कडं देने की आप प्रतिज्ञा करिये, शास्त्रार्थ के लिये मैं इन्दोर आने को तैयार हूं " इत्यादि उपर की तमाम बातोंको जानते हुए भी समाज को सत्य बात बतलाने के बदले अपने महाव्रत भंग होने का विचार भूलकर उलटी रीतिसे "मणिसागर हजुसुधी इन्दोर आवेल नथी अने तेमना पत्रो थी मालूम पडे छे के ते शास्त्रार्थ करे तेम जणातु नथी " इत्यादि जैन पत्रके अंक ४९ वें में विद्याविजयजी के नाम से तार समाचार छपवाकर समाज से धोकाबाजी की, मेरेपर झूठा आक्षेप किया और यही समाचार दूसरी बार फिरभी जैन पत्र के अंक ७ वें में एक अनुभवी के नाम से छपवाये और समाज को अंधेरे में रखा, खूब कपटबाजी खेली. तब मैंने उन्हों को खाचरोद से एक पत्र लिखकर भेजा था, उसकी नकल नीचे मुजब है:—

देव द्रव्यकी शास्त्रार्थ संबंधी जाहिर सूचना।

ता. १२ फरवरी सन् १९२२ के जैनपत्र में 'देव द्रव्य ना शास्त्रार्थ नुं छेवट' नामके लेख में "मुनि-मणिसागर इन्दोर आया नहीं शास्त्रार्थ किया नहीं और उन के पत्रों पर से शास्त्रार्थ करने का मालुम भी पडता नहीं" ऐसा लेख एक अनुभवीके नामसे छपवाया है, वह सब झूठ है, मैंने "देव द्रव्य संबंधी इन्दोरसें शास्त्रार्थ" नामा हेंडबिल छपवा कर श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी को इन्दोर रजिष्टरी से भेजा था और वही हेंडबिल महावीर पत्रके अंक १८ वें में प्रकट भी हो चुका है. उसमें "शास्त्रार्थ का सत्य निर्णय ग्रहण करनेकी और जिसकी प्ररूपणा झूठी ठहरे उसको उसी समय सभामें अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं देने संबंधी सही करनेका या अपनी प्ररूपणा को पीछी खींच लेनेका साफ खुलासा लिखा था" उसपर उन्हों ने मौन धारण कर लिया, कुछ भी जवाब नहीं दिया. इस से 'अनिषेध सो अनुमत' इस कहावत मुजब विजय-धर्मसूरिजीने व उन्हों के शिष्योंने देव द्रव्य संबंधी वर्तमानिक अपनी

प्ररूपणा को पीछी खींच कर मेरे साथ शास्त्रार्थ बंध रखनेका साबित हो गयाथा. इसलिये मैं इन्दोर शास्त्रार्थ के लिये नहीं आया था.

अभीभी ऊपर मुजब श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी अपनी सही से प्रतिज्ञा जाहिर करें तो मैं इन्दोर शास्त्रार्थके लिये आनेको तैयार हूं. उन्हों के शिष्योंमें से कोईभी शास्त्रार्थ करे, मेरेको मंजूर है.

मूझे उपर मुजब प्रतिज्ञा मंजूर है, उन्होंको मंजूर हो तो सही भेजें, मैं तैयार हूं. फजूल अनुभवी के नाम से झूठा लेख छपवाना किसीको योग्य नहीं है.

विशेष सूचना—श्रीमान् विद्याविजयजी ! सही करके न्याय से धर्मवाद करने की ताकत होती तो छल प्रपंच से झूठे लेख छपवाकर लोगों को भ्रम में गेरने का साहस कभी न करते और शुष्क वितंडवाद छोडकर श्रीगौतमस्वामी, श्रीकेशीस्वामी महापुरुषों की तरह लोगों की शंका और विसंवाद दूर करने के लिये न्याय से शुद्ध व्यवहार करते. विशेष क्या लिखें. सम्वत् १९७८ फागण वदी ११ बुधवार.

हस्ताक्षर मुनि-**मणिसागर**, मालवा **खाचरोद**.

यह उपर का पत्र भी खाचरोद सें इन्दोर उन्होंको रजीष्टरी से भिजवाया था (उसकी पहुंच भी आगई है) इस पत्रका भी कुछ भी जवाब नहीं दिया, मौन होकर बैठे. हम खाचरोदसे विहार कर बदनावर गये, वहां से भी पोष्ट कार्ड रजीष्टरी से भेजा उसकी नकल यह है.

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी योग्य सुखशातापूर्वक निवेदन. मैंने खाचरोद से रजीष्टर पत्र भेजा था वह आपको पहुंचा होगा, वहां से विहार कर आज ईधर आये हैं, यहां से विहार कर बडनगर होकर फागण शुदी १३ को या चैत्र वदी २-३ को इन्दोर आप सें शास्त्रार्थ करने के लिये आते हैं. आप विहार न करें.

मेरे साथ आपकी तरफ से कौन शास्त्रार्थ करेगा उसका नाम लिखें. सत्यग्रहण करने की सही भेजें. संवत् १९७८ फागण सुदी ६,

मुनि-**मणिसागर,** मालवा **बदनावर.**

यह रजीष्टर पहुंचा तब उसका जवाब आया वह यह है.

श्रीयुत मणिसागरजी,—पोष्ट कार्ड मल्युं. शास्त्रार्थ माटे अहिं आववानी तमने कोईए मना न्होती करी, रतलाम थी अहिं सुधीनो रस्तो खुल्लो हतो अने अत्यारे पण रस्तो खुल्लो छे जेने शास्त्रार्थ करवोज होय ते तो आवी रीते निरर्थक पत्रों लखी व्यर्थ खर्च गृहस्थो पासे नज करावे.

शास्त्रार्थ ने माटे जे कई नियमों प्रतिज्ञापत्र विगेरेनी आवश्यकता छे, ते मध्यस्थ निमातां तमारे अमारे बन्नेए करवाना छे, ते करी लेवाशे, जो आवशो नहिं अने व्यर्थ पत्रों लख्या करशो तो लोकोने पेली कहेवत याद करवी पडशे के—'भसे ते नहिं कूतरो चरण काटे, लबाउ लहे उपमा एज साटे' अटला माटे जलदी आवो अने शास्त्रार्थ करो.

इन्दोर सीटी, फागण शुदी १०, २४४८, विद्याविजय.

यह पत्र मेरेको बदनावर लिखाथा, मैं चैत्र बदी २ को इन्दोर आया, और उसीरोज शास्त्रार्थके लिये उन्होंको पत्र भेजा, वह यह है.

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी ! योग्य वंदना पूर्वक निवेदन—आपने देवद्रव्य संबंधी अपने विचारों की ४ पत्रिकाओंमें अनेक जगह बहुत अनुचित बातें लिखी हैं, उससंबंधी शास्त्रार्थ के लिये मैं यहांपर आया हूं, वह आपको मालूमही है.

इस शास्त्रार्थ में सत्य निर्णय ठहरे उसको अंगीकार करनेकी और जिसकी प्ररूपणा झूठी ठहरे उसको उसी समय सभामें संघ समक्ष अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं देनेकी प्रतिज्ञा आप मंजूर करें. मेरेकोभी यह प्रतिज्ञा मंजूर है.

आपकी तरफसे कौन शास्त्रार्थ करेगा उसका नाम लिखो, संघ तरफसे मध्यस्थ बनाने वगैरह बातोंका उसके साथ खुलासा किया जावे. संवत् १९७८ चैत्र वदी २ बुधवार. ठे.—जैन श्वेतांबर लायब्रेरी, मोरसली गली, इन्दोर. हस्ताक्षर मुनि-**मणिसागर.**

यहांसे एक पत्र उनका और एक पत्र मेरा क्रमसे जातेहैं.

घमण्डसी जुहारमल का नोहरा, मल्हारगंज,
इन्दोर सीटी, चैत वदि (हिन्दी) ३, २४४८.

श्रीयुत मणिसागरजी,

आपका, पूज्यपाद परमगुरु आचार्य महाराज श्री के नामपर चैत वदि २ का पत्र मिला। आप इन्दोर में तशरीफ लाये हैं, सो मालूम ही है। हम लोग शास्त्रार्थ के लिये पहिले भी तयार थे, अबभी तयार हैं और आगे भी तयार रहेंगे। आप शास्त्रार्थ करने को आये हैं, सो अच्छी बात है। निम्न लिखित बातों के उत्तर शीघ्र दीजिये, ताकि शास्त्रार्थ के लिये अन्यान्य तयारियां करने करवानेकी अनुकूलता हो।

१ आप शास्त्रार्थ करनेको आये हैं, सो किसी एक समुदायिक पक्षकी तर्फसे आयें हैं,या आप अपनीही तर्फसे शास्त्रार्थ करना चाहते हैं?

२ आपकी हार-जीत और भी किसी को मंजूर है?

३ आप किस की आज्ञा में विचरते हैं? जिसकी आज्ञा में विचरते हैं, उसकी आज्ञा शास्त्रार्थ के लिये ली है?

इन प्रश्नों के उत्तर दिये जांय। आपका—**विशालविजय.**

श्रीमान् विजयधर्मसूरिजी,

आपकी तर्फ से श्रीमान् विद्याविजयजी* का पत्र अभी मिला।

---

* यद्यपि पत्र में नाम विशालविजयजी का है, मगर पत्र विद्याविजयजीने लिखा है, झूठाही कपटतासे विशालविजयजी का नाम रक्खा

१ शास्त्रार्थ करने को किसी समुदायिक पक्ष तर्फसे नहीं आया मगर मध्यस्थ पक्ष में मेरी तर्फ से लोगों की शंका दूर करने के लिये शास्त्रार्थ करना चाहता हूं.

२ सत्य निर्णय ठहरे वह मेरेको मंजूर है. अन्य सत्य के अभिलाषी जो सत्य देखेंगे वह ग्रहण करेंगे उन्होंकी खुशी की बात है.

३ मैं मेरे गुरु महाराज उपाध्यायजी श्रीमान् **सुमतिसागरजी** महाराज की आज्ञा में हूं, उन्होंके साथमें ही इन्दोर आया हूं, उन्होंकी इस विषय में शास्त्रार्थसे सत्य निर्णय करनेकी आज्ञा है. संवत् १९७८ चैत्र वदी ३ गुरुवार. हस्ताक्षर मुनि-**मणिसागर, इन्दोर.**

इन्दोर सिटी, चैत वदी ५, २४४८.

श्रीयुत मणिसागरजी,

आप पत्र का जवाब देनेमें इतनी शीघ्रता न करें कि, पत्र किसने लिखा है और किसको जवाब दे रहा हूं, इसका भी ख्याल न रहे*।

यह जान करके बडा ही आश्चर्य हुआ कि, आप किसी समुदायिक पक्ष की तर्फ से नहीं किंतु अपनी ही तर्फ से शास्त्रार्थ करने को आए हैं, और आपकी हार-जीत सिर्फ आप ही को स्वीकार्य है. जब ऐसी अवस्था है तो फिर आप के साथ शास्त्रार्थ करने का परिणाम क्या? क्यों कि, आप जैन समाज में न ऐसे प्रतिष्ठित एवं विद्वान् साधुओं में गिने जाते हैं कि, जिस से आपकी हार-जीत का प्रभाव

है, इसलिये मैंने जान करके उपयोगपूर्वक ख्याल से विद्याविजयजी की कपटता जाहिर होने के लिये उनका नाम लिखा है, सब पत्रों में विशाल विजयजी का नाम कपटता से झूठाही लिखा है, मणिसागर.

* इसका समाधान उपर की फुट नोट में लिख चुका हूं, मणिसागर.

समाज के ऊपर कुछ भी पडे. खैर तिस परभी आप हमारे किसी साधुसे ही शास्त्रार्थ करना चाहते हैं, तो हम तैयार हैं. आप यहां के श्रीसंघ को शास्त्रार्थ की तयारियां के लिये सूचना करें, जिससे कम से कम यहां के श्रीसंघ को तो फायदा हो. संघ को एकत्रित करें, उस समय हम को सूचना करना.

जरासा इस बताका भी खुलासा करियेगा कि, आप के गुरुजी श्रीमान् सुमतिसागरजी किसी की आज्ञा में हैं या स्वतंत्र हैं?

आपका--विशालविजय.

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी,

आपकी तर्फ से पत्र मिला, उस में आप शास्त्रार्थ को उडाने की प्रवृत्ति करते हैं, यह योग्य नहीं है. मैं आपकी ४ पत्रिकाओं की अनुचित बातोंपर शास्त्रार्थ करना चाहता हूं.

१ मंदिरजी में भगवान् की पूजा आरतीकी बोलीके चढावे का मुख्य हेतु आपने क्लेश निवारण का ठहराया है.

२ पूजा आरती के चढावे का द्रव्य देव द्रव्य खाते संबंध नहीं रखता है, ऐसा लिख कर साधारण खाते ले जानेका आपने ठहराया है.

३ देवद्रव्य की वृद्धि बहुत हो गई है, इस लिये अभी देव द्रव्य बढाने की जरूरत नहीं है, ऐसा लिखा है.

४ देवद्रव्य की वृद्धि के लिये बोली बोलने का चढावा करनेका पाठ कोईभी शास्त्र में नहीं है, ऐसा लिखा है.

५ पूजा आरती वगैरह के बोली बोलने के चढावे का द्रव्य साधारण खाते में ले जाने में कोई प्रकार का शास्त्रीय दोष नहीं आता है, ऐसा लिखा है.

६ स्वप्न उतारने वगैरह का द्रव्य देव द्रव्य नहीं हो सकता इसलिये साधारण खातेमें लेजाने का ठहराया है.

७ धार्मिक रिवाज देशकालानुसार फिरते आये हैं, उस मुजब पूजा आरती वगैरह का द्रव्य देव द्रव्य में जानेका जो रिवाज है उसको फिरवाकर साधारण खाते में लेजाने का लिखा है.

८ पूजा आरती वगैरह के चढावेको असुविहितों का आचरण ठहराया है.

९ प्रभुकी भक्तिके कार्योंमें चढावा नहीं होसकता ऐसा लिखा है, इत्यादि. आपकी लिखी अनेक बातोंको मैं बहुतही अनुचित समझता हूं, इसलिये शास्त्रार्थ करने को तयार हूं. आपने मेरे साथ इस विषय में शास्त्रार्थ करने का मंजूर किया था और इन्दौर में शास्त्रार्थ करने को बुलवाया है, अब शास्त्रार्थ को उडाना चाहते हो यह योग्य नहीं है.

१ संवत् १९७८ के "जैन" पत्र के अंक ४५ वें में मेरे अकेले के साथ आपने शास्त्रार्थ करने का मंजूर किया था. अब समुदायिक पक्ष का बहाना लेकर शास्त्रार्थ को उडा देते हो यह अनुचित है.

२ "जैन" पत्र के अंक ४९ वें में तार समाचार छपवाकर मेरे को इन्दोर शास्त्रार्थ के लिये चेलेंज (जाहिर सूचना) देकर जल्द बुलवाया था. मैं शास्त्रार्थ लिये ईधर आया तो आप अब प्रतिष्ठा विद्वत्ता वगैरह के बहानोंसे शास्त्रार्थ उडाना चाहते हो, यह भी अनुचित है.

३ "जैन" पत्र के अंक ७ वें में मैं शास्त्रार्थ करने को इन्दोर नहीं आया, उसपर आप आक्षेप करवाते हैं, अब आगया तो आडी टेढी बातों से शास्त्रार्थ उडाने की कोशीश करते हैं, यह भी अनुचित है.

४ फागण सुदी १० को आपने मेरे को बदनावर पोस्ट कार्ड लिखवाया है, उसमें जल्दी इन्दोर आवो और शास्त्रार्थ करो. शास्त्रार्थ के लिये नियम प्रतिज्ञा वगैरह बातें वादी प्रतिवादी दोनों को मिलकर तै कर

लेनेकी आवश्यकता बतलाई है. अब सब बातें तै करनेका यहांके संघपर गेरकर आप अलग होनेकी चेष्टा करते हैं, यह भी अनुचित है.

५ आपकी तर्फसे चैत्र वदी ३ के पत्र में, मैं इन्दोर शास्त्रार्थ के लिये आया; उस बात को आप खुशीके साथ स्वीकार करते हैं, और मेरेसे ३ प्रश्न पूछेथे, उसका उत्तर मेरी तरफ से आपको मिलने पर शास्त्रार्थ की अन्यान्य तयारियां करने करवाने का मंजूर करते हैं. जब ३ प्रश्नों के उत्तर मेरी तरफसे आपको मिल गये, तब आप चुप बैठकर यहां के संघ को शास्त्रार्थ की तयारियां करवाने का मेरे अकेलेसे कहते हैं और आप अलग हो जाते हैं, यह भी अनुचित ही है.

६ रतलाम से मैंने आपको रजिस्टर कार्ड भेजकर साफ खुलासा लिखाथा कि, आप लोगोंने इन्दोर के श्रावकों को सिखलाकर शास्त्रार्थ करनेका बंध रखवाया है, ऐसी अफवाह लोगोंमें सागरजीके वक्त फैलीथी. और यहांपर भी अब यही मालूम हुआ है कि शास्त्रार्थ में बहुत खर्चा करना पडेगा व बहुत दिनतक शास्त्रार्थ चलनेसे उसकी व्यवस्था करनेमें लोगोंके संसारिक कार्योंमें बाधा पहुंचेगी और आपस में झगडा हो गया तो बडी मुस्कल होगी. हजारोंका खर्चा, हमेशा का विरोधभाव, बदनामी उठाना पडेगी इत्यादि बातों के भय से यहां का संघ इस शास्त्रार्थ को नहीं चाहता. यह आपभी जानतेही होंगे फिर भी शास्त्रार्थ के लिये संघ पर गेरना, यह तो जानबुझकर शास्त्रार्थ उडानेका रस्तालेना योग्य नहीं है.

७ देव द्रव्य संबंधी अपनी प्ररूपणा के आगेवान् आपही हैं, इस लिये इस विषय में आपके साथही शास्त्रार्थ करना युक्तियुक्त है. मैं आपके साथही शास्त्रार्थ करना चाहता हूं. मगर आप अपनी तरफ से किसीको भी शास्त्रार्थ के लिये खडा कर सक्ते हैं. यह बात बहुत दफे मैं आप को लिख चुका हूं, तो भी "आप हमारे किसी साधु से ही शास्त्रार्थ करना चाहते हैं" ऐसा झूठ लिखवाते हैं यह भी योग्य नहीं है.

८ विद्वान् होकर अनुचित कार्य करे, तो उसका प्रतिकार करना हर एक का कर्तव्य है. अभी विद्वत्ता, प्रतिष्ठा व समुदाय से भी युक्ति पूर्वक सत्य को समाज विशेष देखने वाला है. इस लिये आप विद्वत्ता, प्रतिष्ठा व समुदाय की बात लिखकर शास्त्रार्थ उडाना चाहते हैं यह भी सर्वथा अनुचित है.

९ अन्यान्य बातों को आगे लाना छोडकर सत्यग्रहण करने की व झूठ का मिच्छामि दुक्कडं देने की प्रतिज्ञा करिये, और न्याय के अनुसार प्रतिज्ञा, मध्यस्थ, साक्षी व समय नियत करके अन्य तयारियों के लिये दोनों संपसे मिलकर संघ को सूचना देनेका मंजूर करिये.

१ **विशेष सूचनाः**—यहां के स्वयंसेवक मंडल के आगेवान् श्रीयुत हीरालालजी जिन्दाणीने दोनों तर्फ से पत्रव्यवहार बंध करके इस विषयका शांतिपूर्वक शास्त्रार्थ होनेके लिये कोई भी रस्ता निकालने का कहा था, यह बात दोनों पक्षवालों ने मंजूर की थी. मैंने उन्होंके उपर ही विश्वास रखकर कहा कि आप जो योग्य व्यवस्था करेंगे वह मेरेको मान्य है, तब उन्होंने आप लोगोंकी तर्फसे सलाह लेकर दो साक्षी आप की तर्फसे, दो साक्षी मेरी तर्फसे और एक मध्यस्थ नियत करके शास्त्रार्थ करने का ठहराया था. मैंने उस बातको स्वीकार किया था. आपने भी पहिले तो अनुमति दी फिर पीछेसे नामंजूर किया और बीच में संघ की आड ली यह भी आपके योग्य नहीं है.

२ सागरजी के समय से, आपको यहां के संघ की व्यवस्था मालूम ही थी तो फिर आपने संघ की अनुमति लिये बिना मेरेको शास्त्रार्थ के लिये जल्दी क्यों बुलवाया? बुलवानेके वक्त अनुमति न ली, अब शास्त्रार्थ के वक्त संघकी बात बीचमें लाते हैं, यह भी अनुचित है.

३ आपका और मेरा तो प्रीतिभाव ही है. इस शास्त्रार्थ में कोई अंगत कारण नहीं है. आप साधारण खाते को पुष्ट करना चाहते

हैं, वैसे ही मैं भी चाहता हूं. मगर देवद्रव्य की आवक को साधारण खाते ले जाने संबंधी आपकी नवीन प्ररूपणा व्यवहारिक दृष्टिसे और शास्त्रीय दृष्टिसे भी अनुचित होनेसे इस विषय का विशेष निर्णय होने के लिये शास्त्रार्थ करना पडता है. इस लिये आप को उचित है कि शुष्क विवादकी हेतु भूत अन्यान्य बातें बीचमें लाना छोडकर धर्मवादके लिये प्रतिज्ञा, मध्यस्थ वगैरह व्यवस्था करनेको जल्दी से स्वीकार करेंगे.

४ मेरा शास्त्रार्थ आपके साथ है, आपकी तर्फसे कोई भी पत्र लिखे, मगर मैं तो आपको ही लिखुंगा. जबतक कि आप प्रतिज्ञा करके अपनी तर्फसे शास्त्रार्थ करनेवाले मुनिका नाम न लिख भेजेंगे.

महेरबानी करके ऊपरकी तमाम बातोंका अलग अलग खुलासा लिखनाजी. संवत् १९७८ चैत वदी १०; मुनि-**मणिसागर, इन्दोर.**

इन्दोर सिटी, चैत वदी १०, २४४८.

श्रीयुत मणिसागरजी,

आप का ' चौबे का चीट्ठा ' मिला. जो मनुष्य एक दफे यह लिखता था कि ' मैं इन्दोरकी राज्यसभा में शास्त्रार्थ करने को तैयार हूं " वह आज इन्दोर के सेठियों को एकत्रित कर शास्त्रार्थ का निश्चय नहीं कर सकता है, यह कितने आश्चर्य की बात है ? संघके एकत्रित करने की गर्ज हमको नहीं पडी है। यदि आपको शास्त्रार्थ कर विजय पताका फरीने की सात दफे गर्ज पडी हो, तो आप संघ को एकत्रित करिये और हमको बुलाइये। जिस गांव में शास्त्रार्थ करना है, उस गांव का भी संघ शास्त्रार्थ में सम्मिलित नहीं होता है, तो फिर तुम्हारे साथ थूंक उडाने में फायदाही क्या है ?

बाकी आचार्य महाराज श्री की पत्रिका में आपने जो जो अनुचित बातें देखी हैं, वह आप के बुद्धि वैपरीत्य का परिणाम है, यह बात

शास्त्रार्थ के समय आप को बखूबी समझा दी जायगी *। आपका

विशालविजय.

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी,

आपकी तर्फ से पत्र मिला. यद्यपि अन्य बातों में आप योग्य हैं, मगर इस विषय संबंधी तो उपदेश की जगह आग्रह पकड लिया है इस लिये आप न्याय मार्ग को व अपनी विद्वत्ता को दोषी बना रहे हैं.

१ मेरे चैत्र बदी १० के पत्र के प्रत्येक बातका खुलासा जवाब आप नहीं दे सकते हैं, अगर दे सकते होवें तो अब भी दीजिए.

२ सागरजीके समय मध्यस्थ नियत कर प्रतिज्ञा व साक्षी बनाये बाद दोनों मिलाकर अन्य तयारियां के लिये यहां के संघ को सूचना देने का नियम आपने स्वीकार किया था. अब मेरे सामने उसी नियम को भंग कर के आप अन्याय मार्ग पर क्यों जाते हैं ?

३ यहां के संघमेंसे आपके कई भक्त ऐसे भी देखे गये हैं कि वो लोग आपकी इस बातको उचित नहीं समझते हैं, अंगीकार भी नहीं करते हैं, तो भी शास्त्रार्थ में अपने गुरुकी बात हलकी न होने पावे; इसलिये शास्त्रार्थ होना नहीं चाहते हैं. ऐसी दशा में यहां के संघ की आड लेना, यह कितनी कमजोरी है.

४ आपने ही शास्त्रार्थ के लिये इन्दोर शहर पसंद किया है, और मेरेकोभी आपने ही शास्त्रार्थ के लिये इन्दोर बुलवाया है, मगर यहां के संघने मेरेको शास्त्रार्थ के लिये नहीं बुलवाया. इसलिये यहां के संघ को कहने की मेरेको कोई जुरूरत नहीं है, यदि आप अपनी बात

---

* न संघ बीचमें पडे, न शास्त्रार्थ करना पडे और न इन बातों का खुलासा करने का अवसर आवे, न हमारी पोल खुले. कैसी कपटताकी चतुराई है. मणिसागर ।

को सच्ची समझते होवें तो बगर बिलंब शास्त्रार्थ करने का स्वीकार करिये. इस न्याय मार्ग को छोडकर अन्य बातों की आड लेकर अपनी झूठी बातका बचाव करना चाहते हो सो कभी न हो सकेगा. आपने नवीन प्ररूपणा करके जैन समाज में क्लेश फैलाया है, और शासन को बडी भारी हानी पहुंचने का कारण किया है. इसलिये या तो शास्त्रार्थ का स्वीकार करिये या अपनी प्ररूपणा को पीछी खींचकर जैन समाजसे मिच्छामि दुक्कडं देकर इस विषय संबंधी क्लेश को इतनेसेही समाप्त करिये.

५ सत्यग्रहण करनेकी और झूठका मिच्छामि दुक्कडं देने जितनी भी आपकी आत्मामें निर्मलता अभीतक नहीं हुई है, इसलिये आपको यह बात बहुत बार लिखने परभी आपने अभीतक इस बातको स्वीकार नहीं किया और मुख्य बातको उडानेके लिये व्यर्थ अन्य अन्य बातें लिख कर शास्त्रार्थ से पीछे हटते हैं. ' न संघ बीचमें पडे और न हमारी बात खुले ' ऐसी चालबाजीमें कुछ सार नहीं है. यदि आपकी आत्मा निर्मल हो तो, जैसे आप अन्य जाहिर सभा भरते हैं, उसमें यहां का संघ आता है, वैसेही इस शास्त्रार्थकी भी जाहिरसभा भरनेका दिवस वर्तमान-पत्रोंमें जाहिर करिये, उसमें यहां का और अन्यत्र काभी बहुत संघ सभामें आवेगा. व्यर्थ संघकी आड लेकर शास्त्रार्थ से पीछे क्यों हटते हो ?

६ " मैं इन्दोर की राज्यसभामें शास्त्रार्थ करने को तया हूं. " यह बात आपने मेरे कौनसे पत्र ऊपरसे लिखी है. उसकी नकल भेजिये, नहीं तो झूठ का मिच्छामि दुक्कडं दीजिये.

७ आपने जैनपत्रमें " मणिसागर ना पत्रो थी मालूम पडे छे के ते शास्त्रार्थ करे तेम जणातुं नथी." मेरे लिये ऐसा छपवाया है. मैं शास्त्रार्थ करना नहीं चाहता हूं. उन पत्रोंकी नकल भेजिये, अगर तो तीन रोज में छपवाकर जाहिर करिये, नहीं तो झूठ छपवाने का मिच्छामि दुक्कडं दीजिये.

८ मैंने चैत्र वदी ३ के पत्रमें " मध्यस्थ पक्षमें लोगों की शंका दूर करने के लिये मैं शास्त्रार्थ करना चाहता हूं " इत्यादि साफ खुलासा लिखा है. जिसपर भी ' विजयपताका फर्राने ' का आपने झूठ ही लिखवाया है, इसका भी आपको मिच्छामि दुक्कडं देना चाहिये.

९ संयति जन होते हैं, वो तो शास्त्रार्थमें शांतिपूर्वक उपयोगसे सत्यका निर्णय करते हैं, और असंयति मिथ्यात्वी जन होते हैं, वो लोग सत्यका निर्णय करना छोडकर व्यर्थ आपस में थूक उडाकर क्लेश बढाते हैं. बडे अफसोस की बात है कि आप इतने बडे होकर के भी संयति के मार्ग को छोडकर असंयति मिथ्यात्वियोंकी तरह थूंक उडानेको मेरे साथ कैसे तयार होगये हो. इस अनुचित बातका भी आपको मिच्छामि दुक्कडं देना योग्य है.

१० सामान्य साधु होता है, वह भी मिथ्या भाषणसे अपने महाव्रत भंग, लोक निंदा और परभवमें दुर्गतिका भय रखता है, मगर आप इतने बडे होकर के भी मिथ्या भाषण का और अपनी बातको बदलने का कुछभी विचार नहीं रखते हैं. शासनका आधारभूत आचार्य पद है. आपने उस पद को धारण किया है, जिसपर भी अपनी बातका ख्याल नहीं रखते हैं, यह कीतनी अफसोस की बात है. देखो जैन पत्रके लेखोंको और फागण शुदी १० के पोस्ट कार्ड व चैत्र वदी ३ के पत्रको. आप अपनी बातको सत्य करना चाहते हो तो मेरे साथ शास्त्रार्थ करिये, नहीं तो मेरे को धोका बाजी से इन्दोर बुलवाया और अब शास्त्रार्थ नहीं करते उसका भी मिच्छामि दुक्कडं दीजिये.

११ आपकी तर्फ से मेरेको विशालविजयजी के नाम से पत्र लिखने में आते हैं, मगर उन पत्रों को देखनेवाले अनुमान करते हैं कि ऐसे अक्षर व भाषा विशालविजयजीकी न होगी किंतु विद्याविजयजी वगैरह अन्यकी होना संभव है इस लिये आपको सूचना दी जाती है

कि, वो पत्र यदि खास विशालविजयजी के ही लिखे हुए होवें तो उसके निर्णय के लिये आप समय दें उस समय मैं १-२ श्रावकों को भेजूं. उन्होंके सामने उनसे लिखवाया जावे, उससे शक दूर हो. यदि वो पत्र विशालविजयजी ने न लिखें होंगे तो कपटतासे झूठा नाम लिखवाने संबंधी आपको व लिखनेवाले दोनोंको मिच्छामि दुक्कडं देना पडेगा.

विशेष सूचना—शास्त्रार्थ में आपका और मेरा वादी प्रतिवादीका संबंध होने से इतना लिखना पडता है. इस में नाराज होने की कोई बात नहीं है, मगर आप बीमार हैं इसलिये मेरे पत्रों से यदि कुछ भी विशेष तकलीफ होती हो तो थोडे रोज के लिये पत्र व्यवहार बंध रखा जावे, इस में कोई हरकत नहीं है. इस बात का जवाब अवश्य लिखवानाजी. संवत् १९७९, चैत्र शुदी ९. ह. मुनि-**मणिसागर, इन्दोर.**

इन्दोर सीटी, वैशाख व. २, २४४८.

श्रीयुत मणिसागरजी,

तुम्हारा पत्र मिला है. तुम्हारी योग्यता (!) को यहां का संघ अच्छी तरह जान गया है. इस से तुम्हारी दाल नहीं गलती, तो हम क्या करें? लेकिन उस क्रोध के मारे, तुम्हारे पत्र से मालूम होता है कि, तुम्हारी जीभ लंबी हो रही है. आप आप के गुरुजी को कहकर उसका कुछ उपाय करावें; नहीं तो फिर यदि विशेष लंबी हो जायगी तो दुःख के साथ उसका उपाय हमको करना पडेगा. बस, तुम्हारे इस पत्रका उत्तर तो इतनाही काफी है। आपका हितैषी--**विशाल विजय.**

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी,

पत्र आपका मिला. अपनी प्ररूपणा शास्त्रार्थमें साबित कर सकते नहीं, इस लिये फजूल झूठी झूठी बातें लिखते हो. मैंने यहां के संघ

को शास्त्रार्थ करवाने का कहा ही नहीं है. दाल नहीं गलनेका झूठ क्यों लिखते हो. शास्त्रार्थ से पीछे हटकर अपनी अयोग्यता कौन दिखलाता है, यह तो सब बातें प्रकट होनेसे इन्दोर का और सर्व शहरों का संघ अच्छी तरह से जान लेवेगा. मेरेको किसी तरह का क्रोध नहीं है, क्रोध की काइ बात लिखी भी नहीं है. इस लिये क्रोध का भी आप झूठ ही लिखते हो. शास्त्रार्थ की बातों के सिवाय अन्य कोईभी मैंने वैसी बात नहीं लिखी है. इस लिये जीभ लम्बी होने का भी आप झूठ ही लिखते हो.

विशेष सूचना—व्यर्थ काल क्षेप और क्लेश के हेतु भूत आप के ऐसे झूठे पत्रव्यवहार को बंध करिये. शास्त्रार्थ स्वीकार के सिवाय अन्य फजूल बातों का जवाब आगेसे नहीं दिया जावेगा. अगर अपनी बात सच्ची समझते हो तो ३ रोज में मेरे पत्रकी प्रत्येक बात का खुलासा और शास्त्रार्थ का स्वीकार करिये. नहीं तो सब पत्रव्यवहार और उसका निर्णय छपवाकर प्रकट किया जावेगा. उस में आपका झूठा आग्रह जग जाहिर होगा. विशेष क्या लिखें. संवत् १९७९ वैशाख वदी ९.

हस्ताक्षर मुनि-**मणिसागर, इन्दोर.**

ऊपर के तमाम पत्र व्यवहारसे सत्यके पक्षपाती पाठकगण अच्छी तरहसे समझ सकेंगे कि मेरे पत्रोंकी प्रत्येक बातोंका न्यायपूर्वक पूरापूरा जवाब देना तो दूर रहा; मगर एक बातका भी जवाब दे सके नहीं. और जैन पत्रमें व हेंडबिलमें मेरे लिये झूठी झूठी बातें छपवाकर समाज को उलटा समझाया, मेरेपर झूठे आक्षेप किये, उसका मिच्छामि दुक्कडं भी दिया नहीं. और अपनी प्ररूपणा को शास्त्रार्थ में साबित करने की भी हिम्मत हुई नहीं. उसमे शास्त्रार्थ करने की बातें करना छोडकर

झूठी झूठी अन्य बातें लिखकर क्लेश बढानेका हेतु करने लगे इसलिये फजूल ऐसे झूठे पत्रव्यवहार को बंध करना पडा ॥ यह बात तो प्रसिद्ध ही है कि आत्मार्थी महान्पुरुष होते हैं वो तो अपना झूठा आग्रह छोडकर तत्काल अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं देते हैं, व भवभीरु होनेसे लोकलज्जा न रखते हुए सत्य बात ग्रहण करते हैं. और इस लोकके स्वार्थी, बाह्य आडंबरी व अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी होते हैं, वो तो अपने झूठे आग्रह को कभी छोडते नहीं, उन्होंको अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं देना बडा मुश्किल होता है. इसलिये मूलविषयकी बातको छोडकर विषयांतर से या व्यक्तिगत आक्षेपसे, क्रोध व निंदाके कार्योंमें पडकर क्लेश बढाने लगते हैं, और अपनी झूठी बातको जमाने के लिये अनेक तरह की कुयुक्तियोंसे दृष्टिरागी भोले जीवोंको भ्रममें डालकर अपनी बात जमाने की कोशीस करते हैं. और विवादस्थ शंकावाली बातोंका पूरापूरा निर्णय न होनेसे भविष्यमें समाज को बडा भारी धक्का पहुंचता है. एक मतपक्ष जैसा होकर समाज में हमेश क्लेश होता रहता है.इस विषयमें भी ऐसा न हो, इसलिये उसका निवारण करने के लिये ऐसी विवादस्थ शंकावाली बातोंका पूरापूरा निर्णय समाज के सामने रखना योग्य समझकर सर्वतरह की शंकाओंका समाधान पूर्वक अब आगे उसका निर्णय बतलाया जाता है. इसको पूरापूरा उपयोग पूर्वक अवश्य बांचें, सत्यसार ग्रहण करें और अन्यभव्यजीवोंको सत्य बात समझाने की कोशीश करें, उससे तीर्थंकर भगवान् की भक्तिका और देवद्रव्यकी रक्षा होनेका बडा भारी लाभ होगा. विशेष क्या लिखें.

खास जरूरी सूचना.

देवद्रव्य संबंधी विवाद का मेरे साथ शास्त्रार्थ करना मंजूर किया, इसके लिये ही खास मेरेको इन्दोर बुलवाया, मगर शास्त्रार्थ में सत्य ग्रहण करने का व झूठ का मिच्छामि दुक्कडं देनेका स्वीकार किया नहीं. तथा शास्त्रार्थ करनेवाले किसीभी मुनिका नामभी जाहिर नहीं किया. और मेरे पत्रोंका न्याय से कुछभी जवाब न देकर, फजूल आडी टेढी बातें लिखकर अपना बचाव करने के लिये " तुम्हारी जीभ लम्बी हो रही है; उसका कुछ उपाय करावें. यदि विशेष लम्बी हो जायगी तो दुःख के साथ उसका उपाय हमको करना पडेगा। " इत्यादि वाक्योंसे क्रोध, निंदा, अंगत आक्षेप व मारामारी जैसी प्रवृत्ति करने की तयारी बतलाई और शास्त्रार्थ की बात को संघ की आड लेकर उडादी. मैं पहिले ही चैत्र वदी १० के पत्रकी ५-६ कलम में, तथा चैत्र सुदी ९ के पत्रकी ३-४-५ कलम में साफ खुलासा लिख चुका हूं. (देखो पत्र-व्यवहार के पृष्ठ १३-१६-१७) उस प्रकार की व्यवस्था होने से " न संघ बीच में पडे, न शास्त्रार्थ हम को करना पडे और न हमारे झूठकी पोल खुले " इसलिये बारबार हरएक पत्रमें संघकी बात लिखना और शास्त्रार्थ से मुंह छुपाना. यह तो प्रकटही कपटबाजीसे अपनी कमजोरी जाहिर करना है, पाठगगण इस बातका आपही विचार करसकते हैं.

और दूसरी बात यह है कि यह शास्त्रार्थ आपस में साधुओं साधुओंका ही है, श्रावकों श्रावकोंके आपसका नहीं है. इसलिये साधुओं को ही मिलकर इसका निर्णय करना चाहिये. और श्रावक लोग तो जैसे व्याख्यान में सत्य धर्म अंगीकार करने को आते हैं, वैसे ही इस शास्त्रार्थ की सभा में भी श्रावकों को सत्यके अभिलाषी जिज्ञासु के रूप में आना योग्य है और यहां के कई श्रावक तो आप के बचाव के लिये

शास्त्रार्थ को चाहातेही नहीं. तो भी यहां के संघ की सम्मति की आड लेना यह कितनी बडी भूल है.

और जैन इतिहासके प्रमाणसे व दुनिया भरके वादी, प्रतिवादियों के धार्मिक या नैयायीक शास्त्रार्थ के नियमके प्रमाण से भी यही पाया जाता है कि वादी प्रतिवादीके साथ शास्त्रार्थ करनेका मंजूर करलेवे. उस के बाद जब प्रतिवादी आकर वादी को शास्त्रार्थ के लिये आमंत्रण करे, तब वादीको उसके साथ अवश्य ही शास्त्रार्थ करना पडता है मगर वहां किसी तरह का बहाना नहीं बतला सकता. अगर उस समय किसी तरह का बहाना बतलाकर शास्त्रार्थ न करे तो उसकी हार साबित होती है. इस न्याय से भी जब मेरे साथ शास्त्रार्थ करने का मंजूर कर लिया और मैंने यहांपर आकर शास्त्रार्थ करनेवाले मुनि का नाम मांगा व सत्यग्रहण करने की सही मांगी, तब बीच में संघ का बहाना बतला कर शास्त्रार्थ नहीं किया. इस पर सें भी पाठकगण विचार लेवें कि इस शास्त्रार्थ में किसकी हार साबित होती है.

श्रीमान्—विद्याविजयजी को सूचना.

आपने आनंद सागर जी के ऊपर पौष शुदी १५, २४४८ के रोज इन्दोर में एक हेंडबील छपवाकर प्रकट किया था, उसमें आपके सामने पक्षवाले आनंदसागरजी वगैरह में से कोई भी साधु आपके साथ शास्त्रार्थ करने को बाहर नहीं आये. उस संबंधी आप लिखते हैं कि, (एक मणिसागर के सिवाय अन्य किसीने भी अभीतक शास्त्रार्थ की इच्छा प्रगट नहीं की. उसको लिखा गया कि तुम इन्दोर आओ, हम इन्दोर जाते हैं. वह न तो अभीतक इन्दोर आया और न उसने शास्त्रार्थ का स्वाद चखा.) इस लेखमें ' न इन्दोर आया और न शास्त्रार्थ का स्वाद चखा ' ऐसा आक्षेप आप मेरेपर करते हैं, अब मैं शास्त्रार्थ का

स्वाद चखने को इन्दोर आपके सामने आया तो आपने मुंह छुपालिया, और अपने नामसे पत्र लिखनेमें भी डर गये. यह कैसी बहादुरी.

और आपकी सही वाले फागण शुदी १० के पोस्ट कार्ड में आपने शास्त्रार्थ के लिये नियम प्रतिज्ञा वगैरह बातें दोनों पक्षवालों को तै करने का स्वीकार किया था. वो आपका वचन हवा खाता कहां चला गया. और आपने मेरे लिये--शास्त्रार्थ करने को न आवे, शास्त्रार्थ न करे, व्यर्थ पत्र लिखा करें उसपर कुत्तेका दृष्टांत लिखा था. अब व्यर्थ पत्र लिखकर दूसरे की आडमें शास्त्रार्थ से कौन भगता है, और वो कुत्तेका दृष्टांत किस पर बराबर घटता है, उसका विचार पाठकगण स्वयं करेंगे, उसके साथ साथ आप भी करलें.

पाठकगणको सूचना.

उपरके पत्रव्यवहार में शास्त्रार्थ संबंधी मुख्यतासे ९ बातें मैंने विवादस्थ ठहराईथीं, उन्हीं बातोंका शास्त्रार्थ में निर्णय होनेवाला था. मगर उन्होंने शास्त्रार्थ किया नहीं. इसलिये इन्हीं ९ बातोंका खुलासा अब लिखा जाता है यद्यपि श्रीमान् विजयधर्म सूरिजीने अपने देवद्रव्य संबंधी विचारों की ४ पत्रिकाओंमें यह ९ बातें आगे पीछे लिखा हैं, परन्तु मैं तो पत्र व्यवहार के अनुक्रम मुजब यहांपर निर्णय लिखना चाहता हूं. उसमें भी स्वप्न उतारने के द्रव्यको देवद्रव्यमें लेजाना या साधारण खाते, इस बातका सबसे मुख्य बडा भारी विवाद है. इसलिये मैं भी पहिले इस बातका निर्णय बतलाता हूं, पीछे अन्य सब बातों का अनुक्रम से निर्णय बतलाने में आवेगा.

॥ ॐ श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

देवद्रव्यके शास्त्रार्थका दूसरी दफे पत्रव्यवहार.

वैशाख शुदी १ के रोज श्रीमान् विजयधर्म सूरिजीने बहुत श्रावकों के व मेरे परम पूज्य गुरु महाराज श्री १००८ श्री उपाध्यायजी श्रीमान् **सुमतिसागरजी** महाराज के सामने दोनों पक्ष तर्फ से ४ साक्षी बनाकर शास्त्रार्थ करने का और उस में अपनी झूठ ठहरे तो उसका मिच्छामि दुक्कडं देनेका मंजूर किया था. इस बातपर मैंने उन्होंको पत्र भेजा वह यह है:—

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी—आपने कल शामको बहुत श्रावकों के सामने दोनों पक्ष तर्फ से ४ साक्षी बनाकर शास्त्रार्थ होनेका कहा है अगर यह बात आपको मंजूर हो तो शास्त्रार्थ करनेवाले मुनिके नाम के साथ दो साक्षी के भी नाम लिख भेजें पीछे मैं भी दो साक्षी के नाम लिखूंगा. शास्त्रार्थ का समय, स्थान, नियम, मध्यस्थ वगैरह बातों का उसके साथ खुलासा हो जावे तो शास्त्र मंगवाने व देशांतर से आनेवालें को सूचना देने वगैरह बातों का सुभीता होवे, इसलिये इस बातका जलदीसे जवाब मिलना चाहिये. अगर शास्त्रार्थ होना ठहर जावे तो पत्र व्यवहार तो छप चुका है, मगर आगे उसका निर्णय छपवाना बंध रखा जावे।

विशेष सूचना:—देवद्रव्य संबंधी इंदोर की राज्य सभामें शास्त्रार्थ करने का मेरा लिखा हुवा पोष्ट कार्ड लोगोंको बतलाकर क्यों भ्रम में गेरते हो. देवद्रव्य के शास्त्रार्थ की जाहिर सूचना तो आपनें आसोज महिने के जैनपत्र में प्रकट करवायी थी और कार्तिक शुदी १० को मैंने आप के साथ देवद्रव्य संबंधी शास्त्रार्थ करने का मंजूर किया था और यह पोष्ट कार्ड तो धूलियें में आपके किये हुवे पर्युषणा के शास्त्रार्थ के लिये तोफान संबंधी रतलाम से आषाढ सुदीमें मैंने आपको

लिखा था. पर्युषणा का शास्त्रार्थ संबंधी बातको देवद्रव्य के शास्त्रार्थ में लाकर भोले जीवोंको माया वृत्ति से बहकाना छोड दीजिये, विशेष क्या लिखें. संवत् १९७१ वैशाख शुदी २. मुनि—**मणिसागर, इंदोर.**

इस पत्र के जवाब में उनका पत्र आया वह यह है:—

श्रीयुत् मणिसागरजी,

वै. शु. १ के दिन संघके आगेवान गृहस्थों के समक्ष तुम्हारे गुरुजीने स्वीकार किया था कि संघके आगेवान गृहस्थों के समक्ष आप और हम देवद्रव्य संबंधी वाद-विवाद करें. उसमें यदि संघ जाहिर शास्त्रार्थ के लिये आपकी हमारी योग्यता देखेगा, तो अपनी इच्छानुसार प्रबंध करेगा. अब आपको सूचना दी जाती है कि आपके गुरुने मंजूर किये अनुसार आप अपनी योग्यता दिखाना चाहते हैं तो वै. शु. ९ शुक्रवार के दिन दुपहरको १ बजे शेठ घमडसी जुहारमल के नोहरेमें आवें. और उस समय आने के लिये आपभी संघके आगेवानों को सूचना करें.

इंदोर सिटी वैशाख सु. ७, २४४८. **विद्याविजय.**

ऊपरके इस पत्रमें ४ साक्षी बनाने की बातको उडादी. शास्त्रार्थ करने वाले आप या अन्य किसी मुनिका नाम लिखा नहीं. अपनी तरफसे दो साक्षी के नामभी लिखे नहीं. शास्त्रार्थ करनेवाले का नाम बताये बिना तथा दो साक्षी नेमे बिना मैं उनके स्थानपर जाकर किसके साथ विवाद करूं और न्याय अन्याय का व सत्य असत्य का फैसला कौन देवे. इस बातका खुलासा होने के लिये मैंने वैशाख सुदी ८ के रोज उनको पत्र भेजा था उसकी नकल यह है.

श्रीमान्--विजय धर्म सूरिजी—पत्र आपका मिला.

१ सत्य ग्रहण करनेका, झूठका मिच्छामिदुक्कडं देनेका, शास्त्रार्थ करनेवाले मुनिका नाम और आपकी तर्फ से दो साक्षी के नाम जाहिर

क्यों नहीं करते. मेरे पत्रकी बातोंका न्याय से खुलासा जबाब लिख सकते नहीं और अन्य अन्य आडी टेढी बातें लिखकर भोले जीवों को क्यों भ्रममें डालते हो ?

२ मेरे गुरु महाराज श्रीमान् उपाध्यायजी श्री १००८ **श्री सुमति सागरजी** महाराजने जाहिर शास्त्रार्थ करना छोडकर खानगी में शास्त्रार्थ करनेका कहा ही नहीं है, व्यर्थ झूठ क्यों लिखते हो. और जाहिर शास्त्रार्थ करने की बात हो चुकी है उसीका पत्र व्यवहारभी छपचुका है, इसलिये खानगीमें अपने स्थानपर शास्त्रार्थ करनेको आपका कहना ही सर्वथा न्याय विरुद्ध होनेसे प्रमाणभूत नहीं हो सकता.

३ मेरे गुरु महाराजके समक्ष बहुत श्रावकों के सामने आपने दोनों पक्ष तर्फ के ४ साक्षी बनाकर शास्त्रार्थ करनेका कहा है. इस अपने बचन का पालन करना होतो दो साक्षीके नाम लिखो अगर क्षण क्षणमें बदलना ही चाहते हो तो आपकी मरजी.

४ सत्य ग्रहण करने की और झूठका मिच्छामि दुक्कडं देनेकी सही हुएबिना जबान मात्रसे खानगीमें इसविषय की कोईभी बात नहोसकेगी.

५ आपकी सही व शास्त्रार्थ करनेवाले मुनिका और दो साक्षी का नाम जाहिर होनेसे तीसरी मध्यस्थ जगहपर नियमादि बनाने के लिये मैं आनेको तयार हूं.

६ आपका और मेरा प्रीतिभाव है इसलिये आपके स्थानपर आते हैं, फिरभी आवेंगे मगर जाहिर रूपमें शास्त्रार्थ होनेका ठहर गया है; इसलिये इसविषयमें खानगी बातें करने के लिये मैं नहीं आसकता.

७ वैशाख सुदी १ के रोज पर्युषणा संबंधी शास्त्रार्थ वाले मेरे लिखे हुये पहिले के पोष्ट कार्ड के अधूरे अधूरे समाचार लोगोंको बतलाकर आप उलटा पुलटा समझाने लगे. जब एक विदेशी श्रावक मध्यस्थपने उस लेखका सत्य भावार्थ बतलाने लगा, तब आपने उसके

ऊपर बडा भारी क्रोध करके उस निरापराधी श्रावक को अपने स्थानसे बाहिर निकालने का एकदम हुकम करदिया और अपने पदकी, साधु पनेकी मर्यादा को भूलगये (इस बनावको देखकर लोगोंको बहुत बुरा मालुम हुआ परंतु आपकी शर्मसे कुछ बोले नहीं. मगर आपके न्यायकी सहनशीलता की योग्यता को अच्छी तरह समझ गये) उसी तरह यदि सत्य कहने से मेरे परभी आप या आपके अनुयायी किसी तरह से क्रोधमें आकर अनर्थ खडा कर बैठें या मनमाना झूठ लिख देवें तो क्या भरोसा? इस कारणसे मैं आपके स्थानपर इस विषयसंबंधी नहीं आसकता.

८ सत्यग्रहण करनेकी सही वगैरह बातें तै हुए बिना ही पहिले से संघ को सूचना देने का कहना ही फझूल है. और जब मेरे साथ शास्त्रार्थ करने का मंजूर करलिया शास्त्रार्थ के लिये ही इन्दोर जलदिसे मेरेको बुलवाया, तब से ही इस शास्त्रार्थ में मेरी योग्यता साबित हो चुकी है. अब फजूल बारबार योग्यता अयोग्यता की और संघ की आड लेना यह तो अपनी कमजोरी छुपाने का खेल खेलना है.

९ इतने पर भी सेठ घमडसी जुहारमलजी के नोहरे में आपके स्थान पर ही मेरेको इस विषय के शास्त्रार्थ के लिये बोलाने की आप इच्छा रखते हैं, तो मैं आनेको तयार हूं. मगर वहां किसी तरह की गडबड न होने पावे इस बात की सब तरह की जोखमदारी की सही मकानके मालिक सेठ पूनमचंदजी सावणसुखा के पाससे भिजवाइये और मेरे साथ कौन विवाद करेगा उनका नाम लिखिये, आपकी तर्फ से एक साधुके सिवाय अन्य किसीको बीचमें बोलनेका हक न होगा, तथा खाली जबान की बातोंसे काम न चलेगा. सब लेखी व्यवहारसे सवाल-जबाब होंगे. अगर उसमेंभी जितनी आपकी बातें झूठी ठहरें उतनी बातोंके आप मिच्छामि दुक्कडं देंगे या नहीं इन सब बातोंका खुलासा आपके हाथकी सही से २४ घंटे में भेजिये, मैं आने को तयार हूं मेरेको कोई इनकार

नहीं है. यह धर्मवाद होनेसे अनुक्रमसे सब बातोंका खुलासा करना पडेगा. मगर १-२ बातोंके खुलासेसे काम नहीं चलेगा, यह खास ध्यानमें रखना. सम्वत् १९७९ वैशाख शुदी ८. हस्ताक्षर मुनि--**मणिसागर**, इन्दोर.

ऊपर के पत्रका कुछभी जवाब दिया नहीं. और जाहिर सभामें या खानगीमें वैशाख सुदी ९ के रोज अपने स्थानपर न्यायसे सत्य ग्रहण करने वगैरह बातोंकी सही करके अपनी ४ पत्रिकाओंकी झूठी प्ररूपणा को साबित कर सके नहीं तथा अपनी झूठी प्ररूपणाको पीछी खींचकर सर्व संघसे अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं देतेभी लज्जा आई इसलिये साधुधर्म की मर्यादा छोडकर गालियोंके हलके अनुचित शब्द लिखकर हेंडबिलका खेल शुरू किया और मेरेको वैशाख सुदी १५ को दूसरी दफे फिरभी अपने स्थानपर शास्त्रार्थ के लिये बुलाया तब उस समयपर भी मैं वहां शास्त्रार्थ लिये जानेको तैयार था. इसलिये नियमानुसार सही के लिये उन्हों के पास आदमीके साथ पत्र भेजा सो लिया नहीं, वापिस करदिया, तब उस पत्रको फिर भी दूसरी बार रजिष्टरी करवा कर भेजा उस पत्रकी नकल यह है.

श्रीमान्--बिजय धर्मसूरिजी, आपका हेंडबील मिला.

१ आदमीके जैसे जैसे बचन निकलें तैसे तैसेही उसकी जातिकी, कुलकी और आत्माके परिणामों की परीक्षा जगत करलेता है. आपनेभी अपने गुणोंके अनुसार गालियों का भरा हुआ हेंडबील छपवाकर नाटकों के हेंडबीलोंकी तरह बाजारमें चिपकाकर इन्दोर को अपना खूब परिचय बतलाया. ऐसे कामोंसे ही शासन की हिलना, साधुओंपरसे अप्रीति लोगोंकी होती है. आपके भक्त लोगही आपके हेंडबील की आपकी वाणीकी चेष्टा देखकर खूब हंसरहे हैं, तो फिर दूसरे हंसे उसमें कहनाही क्या है ? मैं आपके जैसा करना नहीं चाहता इसलिये हेंडबील छपवाकर जबाब न देता हुआ, आपको पत्रसे ही जबाब देता हूं.

२ मैं वैशाख सुदी ९ के रोज आपके स्थानपर शास्त्रार्थ करने के लिये आनेको तयार था. मगर मेरे वै. शु. ८ के पत्रमें लिखे प्रमाणे नियमानुसार आपने अपनी सही भेजी नहीं. और मकान के मालिक के पाससे भी सही भिजवाइ नहीं, चुप बैठगये. और अब अपनी कमजोरी छुपाने के लिये गालियोंका धंधा ले बैठे, खैर अभीभी उस करार मुजब आप सही भेजिये और मकान के मालिकके पाससेभी सही भिजवाइये तथा ४ साक्षियों मेंसे दो साक्षी के नाम आप लिखें तो मैं दूसरी वक्त फिरभी दो साक्षी लेकर पूर्णिमा को आपके ठहरने के स्थानपर शास्त्रार्थ करने के लिये आनेको तयार हूं.

३ यह सामाजिक विवाद है इसमें गच्छ भेदका कोई संबंध नहीं है. देव द्रव्यके शास्त्रार्थ करनेकी शक्ति न होनेसे गच्छ के नामसे लोगोंको बहकाना यहभी सर्वथा अनुचित ही है.

४ प्रथम जाहिर शास्त्रार्थ करनेमें चुप हुए, दूसरी वक्त वैशाख सुदी ९ के रोज आपके स्थानपर शास्त्रार्थ करनेमेंभी चुप हुए, मौनी महात्मा बन गये.? अब तीसरी वक्त फिरभी मैं तो पूर्णिमा को आपके स्थानपर आनेको तयार हूं. नियमानुसार २४ घंटेमें अपनी सही जलदी भेजिये. अवसर पर मौन करके बैठना और पीछे गालियोंका सरणा लेकर भागियेगा नहीं.

५ इस शास्त्रार्थ में संघ की सम्मति लेनेकी आड लेनाभी फजूल है. क्योंकि यहां के संघ के आगेवान् तो खुलासा कहते हैं कि--शास्त्रार्थ के लिये हमने बुलवाया नहीं है. हमारी सलाह लिये बिनाही अपनी मरजीसे शास्त्रार्थ करनेका स्वीकार करके पत्र लिखकर बुलवाया है. अब हमारा नाम बीच में क्यों लेते हैं. अपनी शक्ति हो तो शास्त्रार्थ करें नहीं तो चुप बैठें.

६ मेरे साथ शास्त्रार्थ करने का मंजूर कर लिया उसके लिये ही जलदी से इन्दोर बुलवाया. अब अपनी ४ पत्रिकाओं की खोटी खोटी बातों को शास्त्रार्थ में साबित करनेकी हिम्मत नहीं और अपनी प्ररूपणा को पीछी खींचकर सर्व संघसे मिच्छामि दुक्कडं देते भी लज्जा आती है. इसलिये योग्यता अयोग्यता के नाम से मुंह छुपाकर शास्त्रार्थ से पीछे हटकर क्यों भगते हो. पहिले शास्त्रार्थ मंजूर करती वक्त आपकी बुद्धि किस जगह शक्कर खाने को चलीगई थी. अब योग्यता अयोग्यता का व यहांके शांत स्वभावी भले संघ का और गालियांका सरणा लेकर अपनी झूठी इज्जत का बचाव करने के लिये भागे जा रहे हो, यही आपकी बहादुरी जग जाहिर होगी.

७ बार बार अपनी योग्यता के अभिमान की बात लिखते थोडा विचार करो. देवद्रव्यको भक्षण करके अनंत संसार बढानेवाली, भोले जीवों को भगवान् की पूजा आरती के चढावे की भक्ति में अंतराय करनेवाली, देवद्रव्य के लाखों रुपयों की आवक को नाश करनेवाली, हजारों लोगों को संशय में गेरनेवाली, भविष्य में मंदिर, मूर्ति, तीर्थ-क्षेत्रों की बडी भारी आशातना करनेवाली, और अपने पद की साधुपने की मर्यादा छोडकर गालियों से शासन की हिलना करानेवाली व अपने दुराग्रहको अभिनिवेशिक मिथ्यात्व से पुष्ट करनेवाली, ऐसी आपकी योग्यता आपके पासही रखो. जैन समाज में से किसीको भी ऐसी योग्यता का अंशमात्र भी मत हो, यही देव गुरु व शासन रक्षक देवों से मेरी प्रार्थना है.

शास्त्रार्थ से फल क्या और हारनेवाले को दंड क्या?

८ शांतिपूर्वक न्याय से शास्त्रार्थ होकर निर्णय हो जावे तो हजारों लोगों की शंका मिटे, समाज का क्लेश मिटे, देवद्रव्य की आवक रूकी है सो आवेगी, देवद्रव्य के भक्षण के पाप से समाज बचेगा, देवद्रव्यकी

आवक ज्यादे होने से जीर्णोद्धार तर्थिरक्षा वगैरह बहुत बडे बडे लाभ होंगे. और इस शास्त्रार्थ में जिसकी प्ररूपणा झूठी ठहरे उस हारनेवाले को राज्यद्वारी या आपसके क्लेशकी--मकशीजी, अंतरीक्षजी, समेत-शिखरजी, गिरनारजी वगैरह में से कोई भी एक बडे तीर्थकी आशातना मिटाने का दंड दिया जावेगा और जब तक करार मुजब तीर्थकी आशातना नहीं मिटावेगा तब तक उसको संघ बाहिर रहना पडेगा. इस करार से भी यदि आपकी ४ पत्रिकाओंकी सब बातों को सत्य ठहराने की हिम्मत हो तो शास्त्रार्थ करिये. न्याय मार्गका उल्लंघन कर दिया और गालियां पर आगये, मिच्छामि दुक्कडं देनेके लायक रहे नहीं. इसलिये यह करार लिखना पडा है. अगर इच्छा हो तो मंजूर करो. संवत् १९७९ वैशाख सुदी १३. हस्ताक्षर मुनि--**मणिसागर**, इन्दोर.

ऊपर के सब लेखसे सर्व श्रीसंघ आपही बिचार कर सकता है कि इस शास्त्रार्थ से तीर्थरक्षा वगैरह का शासन को कितना बडा भारी लाभ होता. मैं उन्हों के स्थानपर उनके बुलानेसे वैशाख सुदी ९ के रोज तथा पूर्णिमाके रोज दोनों बख्त शास्त्रार्थ करनेके लिये जानेको तयार था. मगर उन्होंने ४ साक्षी बनाकर न्यायसे शास्त्रार्थ करनेका मंजूर किया नहीं. सत्यग्रहण व हारने वालेको तीर्थ रक्षाकी शिक्षा करने वगैरह बातों की सहीभी दी नहीं. और क्रोधसे गालियोंपर आकर अपनी मर्यादा भूलगये. नियमानुसार जाहिर सभामें या उनके स्थानपर खानगी में शास्त्रार्थ किये बिना व्यर्थ यहांके संघका और गालियोंका सरणा लेकर पूर्णिमा के रोज भी ठहरे नहीं बडी ही फजर विहार कर गये. इस प्रकारकी व्यवस्था से सर्व संघ उनके न्यायकी और सत्यताकी परीक्षा आपसेही कर लेवेगा इति शुभम्. संवत् १९७९ वैशाख सुदी १५.

हस्ताक्षर मुनि-**मणिसागर**, इन्दौर.

श्री चतुर्विध सर्व संघको जाहिर सूचना.

इन्दोरके संघने अपने शहरमें देवद्रव्यकी चर्चासंबंधी क्लेश बढानेवाले कोईभी हेंडबिल छपवाने नहीं, ऐसा ठहराव करके ता. २३-१-२२ के रोज एक हेंडबिल प्रकट किया था उसमें विजयधर्मसूरिजी जब तक इन्दोर में ठहरें तब तक अपने शिष्योंकी मार्फत क्लेश बढानेवाले कोई भी हेंडबिल नहीं छपवाने देंगे, ऐसा करार छपवाया था. वह इंदौर के संघका ठहराव तथा विजयधर्म सूरिजी का बचन करार इन दोनों बातोंका भंग हुआ. वैशाख शुदी १० के रोज उन्होंकी तर्फ से विद्याविजयजी के नामसे एक हेंडबिल प्रकट हुआहै, उसमें साधु महात्माओंके अवाच्य और अनार्य भाषाके शब्द लिखे गये हैं उसका नमूना नीचे मुजब है:—

" प्रसिद्धी की इच्छा पूर्ण करने के लिये बहुत से मनुष्य क्या क्या नहीं करते ? लोग भले ही 'जीवराम भटके नातेदार' कहें, परंतु उस निमित्तसे भी प्रसिद्धी तो होगी. होली के त्योंहार में कई लोग विचित्र वेष बनाकर प्रजापति के घोडोंपर क्यों चढते हैं ? इसलिये कि—वे यह समझते हैं कि—इस निमित्तसे भी हमारी प्रसिद्धी तो होगी. हमको लोग राजा [होलीका राजा] कहेंगे. बस, इसी प्रकार जैन समाज में भी कई निरक्षर लोग प्रसिद्धी के लिये सिरतोड प्रयत्न कर रहे हैं. और खास कर के देवद्रव्यकी चर्चा में ऐसे कई लोगोंने बिलमें से मुंह निकाला है. लेकिन ऐसे बिन जोखमदार अल्लटप्पुओं के बचनोंपर जैन समाज कभी ध्यान नहीं दे सकती इत्यादि " और उसके नीचे वैशाख शुदी १५ के रोज अपने स्थानपर मेरेको शास्त्रार्थ के लिये बुलानेका छापा है.

इस हेंडबिल में देवद्रव्यकी चर्चा में भाग लेनेवाले सर्व आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, गणि, पन्यास व सर्व मुनिमंडल, उन सबको ऊपर के विशेषण दिये हैं और सबकी बड़ी भारी अवज्ञा की है. इस हेंडबिल को

देखकर इन्दोर के सब संघको बहुत बुरा मालूमहुआ तब संघने आगेवान् सेठियों की और अन्य सद्गृहस्थों की ३६ सहीयोंवाला एक विनंतीपत्र छपवाकर प्रकट किया और विजयधर्म सूरिजी के इस अनुचित कर्तव्यपर अपना असंतोष जाहिर किया. उस विनंतीपत्रकी नकल नीचे मुजब है:-

पूज्यपाद आचार्य श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी से नम्र विनंती.

देवद्रव्य की चर्चा बाबद आपस में क्लेश बढाने वाले गालीगलोच के व गलीच भाषा के हेंडबील नहीं छपवाने का तारीख २३।१।२२ के रोज " देवद्रव्य की चर्चा और इन्दौर का संघ " नामक शीर्षक के हेंडबील में इन्दौरमें ठहराव हो चुका है. यह बात आपने भी स्वीकार करली थी व उस विश्वासपर ही आपके कथानुसार यहां के संघ के आगेवानोंने सहियें दी थीं. श्रीमान् आनंदसागरसूरिजी के और आपके व मुनि मणिसागरजी के और आपके आपसमें जैसा पत्र व्यवहार हुआ था वैसा दोनों ने छपवाया, उसमें हम लोगों को कोई उजर नहीं लेकिन वैशाख शुदी १० के दिन आपकी तरफ से एक हेंडबील छपकर प्रगट हुआ है और बाजारमें लगवाया गया है व बांटागया है. उसमें हम गृहस्थी लोग भी जैसे अपशब्द नहीं लिख सकते वैसे गलीच भाषा के हलके शब्द आप साधु महात्मा होते हुए भी आपने लिखे हैं. उस से बाजार में शासन की हिलना होरही है. आप हम लोगोंको शांति रखने का सदैव उपदेश देते हैं और आप खुद ऐसे क्लेश बढाने वाले कार्य करते हैं यह देखकर हम लोगों को बडा अफसोस हुआ है इस समय हिंदू मुसलमानों में संप होरहा है. ऐसे अवसर में हमारे धर्म गुरु ऐसे घृणित शब्दों के हेंडबील छपवाकर जाहिर करें यह बडे दुःख की बात है. आपने हमलोगों से मंजूर किया था कि आयंदा कोई हेंडबील प्रगट नहीं किया जावेगा. हम आपके बचन के विश्वासपर रहे थे. आज हमारा वो विश्वास बिलकुल भंग होगया. ऐसे हेंडबील छपवाकर आपने अपना

अपमान करवाया और अन्य दर्शनियों में भी आपकी बडी हिलना हुई है. अतएव आपसे जाहिर विनंती है कि आप अपना हेंडबिल वापस लीजिये. ऐसे हेंडबिल पर हम लोग अपना असंतोष जाहिर करते हैं. विशेष क्या अर्ज करें.

विशेष विनंती—यहां पर शास्त्रार्थ न होने का पहिले से ही निश्चय हो चुका है तिसपर भी आपने शास्त्रार्थ करनेका मंजूर करलिया और संघ की सम्मति लिये बिना मुनि मणिसागरजी को बुलवाया. अब जब कि वो आगये तो संघ की बात बीचमें क्यों लाते हैं. आपकी इच्छा हो तो शास्त्रार्थ करें या न करें, बीचमें संघ का नाम बदनाम करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है. तारीख १०।५।२२

१ परतापचंद हिंमतराम	२ शिवचंद कोठारी
३ हरकचन्द शांतिदास	४ दीपचंद भंडारी
५ सुगनचंद तेजकरण सुराणा	६ सरदारमल मूलचन्द
७ जीतमल कोठारी	८ जैचन्द कोठारी
९ जोरावरमल बागमल	१० फौजमल बच्छावत
११ नन्दराम जडावचंद	१२ चांदमल उत्तमचन्द
१३ सुरजमल नाहटा	१४ सागरमल मेहता
१५ मानमल सिरेमल	१६ हीराचंद जवरचन्द
१७ फोजमल श्रीमाल	१८ हरकचन्द नेमीचन्द
१९ शिखरचन्द छाजेड	२० मेहता सोभागसिंग
२१ कस्तूरचन्द पोखरना	२२ प्रतापचन्द धूलजी
२३ अमरचन्द दीपचन्द	२४ बागमल सांड
२५ सरदारमल चतर	२६ पेमचंद असलाजी
२७ हीरालाल मोतीलाल	२८ हीरालाल मेहता

२९ लल्लूभाई भाईचन्द	३० मेता पीतांबर केवलचंद
३१ भागीरथ छाजेड	३२ सोभागमल मेहता
३३ मिसरीलाल पालेरचा	३४ मनालाल कोठारी
३५ अमोलक खोडीदास	३६ लखमीचंद अमरचंद

ऊपर का विनंती पत्र जब छपकर प्रकट हुआ तब विद्याविजयजीने दीर्घ विचार किये बिनाही एकदम मन माना ' मणिसागरजीका एक और उत्पात ' नामक हेंडबिल छपवाकर प्रकट करवाया. उसमें लिखा कि यह सब सहियें मणिसागरने करवाई हैं, उस में सब सेठियोंकी सही नहीं है, इस विनंतीपत्र के साथ संघकी कुछभी जोखमदारी नहीं है, आचार्य महाराज जैन धर्म की रक्षा के लिये अपने प्राणोंकी आहुति देनेको तयार हैं. जिन्होंने राजा महाराजाओं को प्रतिबोध देकर जैनधर्म के प्रति अनुराग बढाया है. मणिसागरको हमने इन्दोर से नहीं बुलाया धूलिये से बुलाया है, गलीच भाषा हमारी नहीं है, मणिसागरकी है, शासन की हिलना हमने नहीं करवाई है, माणिसागर ने करवाई है. ऐसी विनंतीको हम रद्दीकी टोकरीके स्वाधीन करते हैं ऐसा विद्याविजयजीने ज्येष्ठ वदी २के रोज हेंडबिल छपवाकर अपने बचावके लिये प्रत्यक्ष झूठी झूठी बातें लिखकर भोले लोगोंको भरमाने का साहस किया तब उसपर मैंने एक विज्ञापन छपवाकर प्रकट किया था उसकी नकल यह है:—

विद्याविजयजी का मृषावाद.

१ ज्येष्ठ बदी २ के रोज एक हेंडबिल छपवाकर विद्याविजयजी ने लिखा है कि " मणिसागर को हमने इन्दौरसे नहीं बुलाया धूलिया से बुलाया है," यह प्रत्यक्षही मृषा है. क्योंकि देखो अभी फागण सुदी १० के रोज सेठ घमडसी जुहारमल के नोहरेमें से विद्याविजयजीने खास पोष्टकार्ड लिखकर मेरेको बदनावरसे शास्त्रार्थ के लिये इन्दोर जल्दी से

आनेका और शास्त्रार्थ करनेका लिखा है उसकी नकल देवद्रव्यसम्बन्धी शास्त्रार्थ के पत्र व्यवहार के पृष्ठ ८वेंमें छपचुकी है. व उन्होंके हस्ताक्षर का खास पोष्टकार्ड भी मेरेपास मौजूद है. जिसको शक हो वे मेरेपास आकर बांच लेवें.

२ उसी पोष्टकार्ड में उन्होंने शास्त्रार्थ के लिये नियम, साक्षी, मध्यस्थ वगैरह बातें दोनों को मिलकर करलेने का साफ खुलासा लिखा था. अब वो बदल गये. यह दूसरा मृषावाद हैं.

३ वैशाख सुदी १० के रोज उन्होंने एक हेंडबिल छपवाया है उसमें साधु धर्मकी मर्यादाके विरुद्ध गलीच, अवाच्य व अनार्य भाषा लिख कर शासनकी व अपनी हिलना करवाई है, और अपने गुण प्रकट किये हैं. यह बात इन्दौर के लोगों को प्रकटही है. जिसपरभी मणिसागरने गलीच भाषा लिखकर शासनकी हिलना करवाई है, ऐसा लिखा यह भी तीसरा प्रत्यक्ष मृषा भाषण है. मैंने आजतक कोई भी वैसी भाषा का या किसी तरह का हेंडबिल इन्दोरमें छपवाकर प्रकट किया ही नहीं है. यह बात इन्दोरका सर्व संघ अच्छी तरहसे जानता है.

४ इन्दोरसे ही पोष बदी में भावनगर के जैन पत्रमें विद्याविजयजी ने तार समाचार छपवाकर मेरेको शास्त्रार्थ के लिये चेलेंज (जाहिर सूचना) दीथी. अबमैं शास्त्रार्थकेलिये आया तो न्यायानुसार नियम, साक्षी, मध्यस्थ वगैरह व्यवस्था करके शास्त्रार्थ करते नहीं. यह चौथा मृषावाद है.

५ उसी तार समाचार में " मणिसागर हजुसुधी इन्दोर आवेल नथी. अने तेमना पत्रोथी मालूम पडेछे के ते शास्त्रार्थ करे तेम जणातुं नथी, " ऐसा छपवाया है. मैं शास्त्रार्थ करना नहीं चाहता उन पत्रोंकी नकल आजतक बतला सके नहीं, और झूठ छपवानेका मिच्छामि दुक्कडं देतेभी लज्जा करते हैं. यह प्रत्यक्ष ही पांचवी माया मृषा है.

६ देवद्रव्य संबंधी इन्दोरकी राज्य सभामें मैं शास्त्रार्थ करनेको तयार हूं. ऐसा आपने पोष सुदी १५ के अपने हेंडबिलमें छपवाया है. यह छठा मृषावाद है. मैंने ऐसा लिखा नहीं है. अगर लिखा कहते हैं तो पत्रकी नकल प्रकट करें, व्यर्थ भोले लोगोंको भ्रममें गेरना योग्य नहीं है.

७ आपके ज्येष्ठ वदी २के हेंडबिलमें "मणिसागरजीका एक और उत्पात" यहभी प्रत्यक्ष सातवी मृषा है. मणिसागरने ऐसा कोईभी उत्पात नहीं किया है किंतु विजयधर्म सूरिजीने सर्व जैन समाज में उत्पात खडा किया है और देवद्रव्य को नाश करने का बखेडा फैलाया है, मैं तो उस उत्पात को शांत करने के लिये व देवद्रव्य की रक्षा करने के लिये आप के बुलाने से शास्त्रार्थ के लिये इधर आया हूं, यह सर्वत्र प्रसिद्ध ही है.

८ आपने ज्येष्ठ वदी २ के अपने हेंडबिल में विनंतीपत्रके साथ संघकी कुछभी जोखमदारी नहीं है. ऐसा लिखा सोभी आठवां मृषावाद है सही करनेवाले संघ के अंदर हैं, आपके अनुचित बर्ताव को रोकने का सर्व जैनीमात्र का हक्क है उस विनंती पत्र में सब सम्मत हैं. अगर इन्दोर के संघ के जो जो आगेवान् या सद्गृहस्थ आप के वैशाख सुदी १०के हेंडबिल को अच्छा समझते होवें और ऐसे अवाच्य व साधुके नहीं लिखने योग्य शब्द लिखने की उन्होंने आपको सलाह दी होवे और २३-१-२२ के रोज वाले हेंडबिल के इन्दोरके संघ के ठहराव को भंग करनेमें सम्मत होवें तो आपने जिन जिनके नाम अपने ज्येष्ठ बदी २ के हेंडबिल में छापे हैं उन्होंके हस्ताक्षर की सही प्रकट करवाइये. नहीं तो आपका लिखना सब झूठ साबित होगा और आयंदाभी आपका लेख सब झूठा समझा जावेगा.

९ मैंने विनंती पत्र में किसी की भी सही करवाई नहीं है. आपने अपने गुरु महाराज का बचन भंग किया और इन्दोरके संघके

ठहराव का भी भंग किया तब उसपर इन्दोर के निवासियोंने जाहिर रूप में रात्रि को बजार में सहीयें करवाई हैं यह बात तो प्रकटही है जिस पर भी मेरेपर सही करवाने का आरोप रखते हैं, यह भी आपका नवमा मृषा वाद ही है.

१० इन सब बातों में यदि विद्याविजयजी सत्यवादी होवें तो२४ घंटेमें पूरा पूरा खुलासा प्रकट करें. नहीं तो लोकलज्जा छोडकर अपने मृषावाद का जाहिर रूप में मिच्छामि दुक्कडं देकर शुद्ध होवें व अपनी आत्माको निर्मल करें और यदि शास्त्रार्थ करना चाहते होवें तो अपने गुरु महाराज की सही लेकर जाहिर में आवें. फिर पीछे से झूठा झूठा छपवा कर अपनी इज्जत रखनेके लिये प्रपंचबाजीसे भोले लोगोंको भरमानेका धंधा न ले बैठें. मैं यह विज्ञापन छपवाना नहीं चाहता था मगर आपने दो हेंडबिल छपवाकर उस में बहुत अनुचित शब्द लिखे तथा झूठी झूठी बातें लिखकर बहुत लोगोंको संशय में गेरे, इसलिये उन्हों की शंका दूर करनेके लिये मेरेको इतना लिखना पडा है

संवत् १९७९ ज्येष्ठ वदी ९. मुनि—**मणिसागर**, इन्दोर.

इस विज्ञापन पत्र का कुछभी जवाब दिया नहीं, अपने नो (९) मृषावादों को सत्य साबित कर सके नहीं व उन भूलों का जाहिर रूप में मिच्छामि दुक्कडं देकर अपनी आत्माको निर्मल भी किया नहीं और अपने गुरुमहाराजकी सही लेकर शास्त्रार्थ भी किया नहीं, चुप होकर कल रोज यहांसे विहार करगये. उस पर से उनकी आत्मा में सत्यता, निर्मलता व शास्त्रार्थ करने की कैसी योग्यता है, उस बातका विचार ऊपर के सब लेखसे सर्व संघ आप ही कर लेवेगा.

और संघकी विनंती को मान नहीं दिया व अपनी प्रत्यक्ष भूल का भी स्वीकार नहीं किया व ज्येष्ठ वदी २ के अपने हेंडबिल में झूठी

झूठी बातें लिखकर अपने दुराग्रह को छोडा भी नहीं. तब उसपर संघके आगेवान् गृहस्थ तर्फ से एक सूचना पत्र प्रकट हुआ वह यह है:-

श्रीमान् विद्याविजयजी महाराज,

आपके ज्येष्ठ वदी २ के हेंडबिल को देखकर हमें अत्यन्त आश्चर्य व खेद हुआ क्यों कि आप उस में लिखते हैं कि बिचारे मणिसागरजीने कुछ गृहस्थों के हस्ताक्षर करवाकर तारीख १०-५-२२ को एक हेंडबिल निकाला है. **महात्मन्,** तो क्या आप यह बात सप्रमाण साबित कर सकते हैं कि श्रीमान् मणिसागरजी महाराजने ही गृहस्थों से हस्ताक्षर करवाकर वह हेंडबिल निकाला है?

आप लिखते हैं कि इन्दोर के कुछ गृहस्थों के हस्ताक्षर से ही तारीख १०-५-२२ का हेंडबिल छपा है उस में एकाध आगेवान् के सिवाय अन्य किसी आगेवान की सही नहीं है तो क्या हेंडबिल पर सही करनेवाले गृहस्थ संघ में नहीं कहला सकते? यदि कहला सकते हैं तो क्या उनकी प्रार्थना मानने योग्य नहीं है?

आप के हेंडबिल पर से साफ जाहिर होता है कि संघकी व्याख्या में धनी मानी लोगोंका ही समावेश हो सकता है अन्य का नहीं तो क्या यह बात शास्त्रोक्त और प्रमाण भूत है?

आपने जो पहला हेंडबिल अनुचित भाषा में वैशाख सुदी १० को निकाला है उस में जिन जिन आगेवान गृहस्थों के नाम लिखे हैं उनकी सम्मति आपने अवश्यही ली होगी ऐसा हमें पूर्ण विश्वास है.

आप लिखते हैं कि आचार्य श्रीविजयधर्मसूरिजी महाराज जैन धर्म की रक्षा के लिये अपने प्राणों की आहुति देनेको तैयार रहते हैं और जिन्होंने राजा महाराजाओं को प्रतिबोध कर. जैन धर्म के प्रति अनुराग बढाया है. ऐसे परमोपकारी आचार्य महाराज से हमारा नम्र निवेदन है

कि वे मकसीजीका झगडा निपटवाकर अपनी और अपने समाज की कीर्ति जगजाहिर करके मालव देश में पधारने की सार्थकता करलें.

यह सौभाग्य की बात है कि अब आचार्य महाराज की प्रकृती अच्छी होगई है और वे विहार भी कर सकते हैं. हमें पूर्ण विश्वास है कि अन्य महाराजाओं के सदृश्य श्रीमंत ग्वालियर नरेश को भी प्रतिबोध देकर इस तीर्थकी आशातना दूरकर समाजका क्लेश मिटाकर ही आचार्य महाराज आगे विहार करेंगे कारण कि यह कार्य आपके गुरुमहाराजसरीखे प्रभावशाली एवं परोपकारी महात्मासे ही सुगमतापूर्वक हो सकता है.

आप अन्त में अपने उच्च विचारोंका प्रमाण देते हुए लिखते हैं कि ऐसे हेंडबिल और ऐसी विनंतियां रद्दीकी टोकरी के ही स्वाधीन करने लायक गिनते हैं. आपको संघकी विनंती रद्दी की टोकरी के स्वाधीन करनेमें कुछभी संकोच नहीं हुआ लेकिन क्या इसके साथही साथ आपने अपने पूज्य गुरुमहाराजके पवित्र नाम को भी [जिनके नाम विनंती की गई थी और जिनके आप आज्ञाकारी शिष्य हैं] रद्दीकी टोकरीके स्वाधीन कर दिया है ? इससे जनताको आपकी विशाल बुद्धि का परिचय मिल गया. अस्तु. कहांतक लिखा जाय. संघके नम्र प्रार्थना पत्र को रद्दीकी टोकरी में डालकर संघकी ओरसे आपने आचार्य महाराजसहित अपने साधु मंडलको रद्दीकी टोकरीके स्वाधीन करनेके योग्य साबित करलिया है. इसके लिये आपको अनेकशः साधुवाद--धन्यवाद हैं. ता. २०-५-२२.

संघके आगेवान् गृहस्थ.

ऊपरके तमाम पत्रव्यवहार के लेखसे, संघकी विनंतीके लेखसे और ऊपर के सूचना पत्रके लेखसे श्रीविजयधर्मसूरिजी अपने परिवारसहित इन्दोरमें अपनी न्याय शीलताकी, साधु धर्मके मर्यादा की, और देवद्रव्यके शास्त्रार्थ में सत्यता की कैसी शोभा प्राप्त करके यहांसे कल रोज दुपहर

को आगरा शहरकी तरफ विहार करगये, उसका विचार पाठक आपही कर लेंगे. सं. १९७९ ज्येष्ठ वदी ११ सोमवार. मुनि–**मणिसागर** इन्दोर.

विजय धर्मसूरिजी की कपट बाजी.

१ पहिले मेरे साथ देवद्रव्य संबंधी शास्त्रार्थ करनेका मंजूर किया था तब तो मैं सब बातों में योग्य था अब शास्त्रार्थ करने के समय अयोग्य कहते हैं. यह कैसी कपटबाजी है.

२ जब इन्दौर से फागण सुदी १० के रोज पोष्टकार्ड लिखवा कर मेरे को बदनावर से शास्त्रार्थ के लिये इन्दोर जल्दी आनेका लिखवाया और उसमें शास्त्रार्थ के लिये नियम, प्रतिज्ञापत्र, मध्यस्थ वगैरह बातें दोनोंने मिलकर करलेने का लिखा था तब तो इन्दौर के संघकी सम्मति लेना भूलगये थे. अब मैं उनके लिखेप्रमाणे आया और शास्त्रार्थ करनेके लिये तैयार हुआ. जब अपनी प्रतिज्ञा मुजब शास्त्रार्थ की शक्ति नहीं हुई तब संघकी सम्मति लेनेकी आड लेते हैं यहकैसी कपटबाजीहै.

३ वैशाख सुदी ९ के रोज मेरेको अपने स्थानपर शास्त्रार्थ करनेके लिये बुलाया था. जब मैंने व्यवस्था संभालनेके संबंधमें स्थानके (मकानके) मालिक की सही मांगी तब भिजवाई नहीं और आपनेभी सत्य निर्णय होवे सो ग्रहण करने वगेरह नियम मंजूर किये नहीं, चार (४) साक्षी बनाये नहीं, शास्त्रार्थ करनेवाले मुनि का नामभी बतलाया नहीं, सब बातों में चुपकी लगादी. फिर अब बोलते हैं हम तो शास्त्रार्थ के लिये तैयार थे. यह कैसी कपट बाजी है.

४ वैशाख सुदी १५ के रोज फिरभी मेरेको अपने स्थानपर शास्त्रार्थ करने के लिये दूसरी वक्त बुलाया परंतु क्रोधमें भभक गये थे, अपनी मर्यादा बाहर होगये थे. तब मैंने सत्यग्रहण करने की व हारनेवाले को तीर्थ रक्षाकी शिक्षा करने वगेरह नियमोंकी सहीकेलिये पत्र भेजा सो

लिया नहीं, सत्य असत्य न्याय अन्याय के फैसले देनेवाले साक्षी नेमे नहीं, व्यवस्था संभालने संबंधी मकान के मालिक की सही भिजवाई नहीं और गालियों का सरणा लेकर पूर्णिमाकी बडी फजर ही मांडवगढ की यात्राके नामसे विहार करगये. फिर बोलते हैं हम तो शास्त्रार्थ करने को तयार थे यह कैसी कपट बाज़ी है.

५ अपनी कल्पना मुजब बातें लिखकर प्रकट करना सहज बात है, परंतु जब अपने सामने प्रतिवादी आकर उसका खुलासा करने को तैयार होवे तब उन बातोंको शास्त्रार्थसे सभामें साबित करना बडा मुश्किल होता है, और पीछे लोक लज्जा छोडकर अपनी भूलको स्वीकार करने में भी बडी मुश्किल समझते हैं, इसलिये अपनी बातको रखनेके लिये अनेक तरहके प्रपंच करने पडते हैं. एक झूठके पीछे अनेक झूठ बोलने पडते हैं, एक कपटके पीछे अनेक कपट करने पडते हैं. यह बात देवद्रव्य के शास्त्रार्थ के मामले में भी प्रत्यक्षतया देखने में आती है. हम शास्त्रार्थ करने के लिये तैयार हैं, तैयार हैं, ऐसी बातें करते हैं. मगर शास्त्रार्थ संबंधी न्याय के अनुसार नियमादि बनानेके लिये पत्र भेजे उन्होंको हाथमें लेते भी डरते हैं और उसकी सुव्यवस्था करने में मौन हैं. अगर सच्चे दिलसे न्याय के अनुसार शास्त्रार्थ करनेको चाहते होवें तो फिर सत्यग्रहण करनेकी, झूठेको शिक्षा करनेकी सही करनेमें और साक्षी, मध्यस्थ, नियमादि बनानेमें इतनी भाग नास क्यों करते हैं. शास्त्रार्थकी बातें करनेमें तो मुंह छुपाते हैं और फजूल बातें लिखवाकर क्लेश बढानेमें आगे होते हैं, यह कैसी कपटबाजी है. इसका विचार पाठकगण आपही करलेंगे.

विजयधर्मसूरिजी का बडा भारी अनर्थ।

वीतराग प्रभु के भक्तलोग अपने भावसे शक्तिके अनुसार भगवान् की भक्तिके लिये पूजा, आरती, स्वप्न, पालना वगैरहके चढावे बोलते हैं,

उनसे ही देवद्रव्य की वृद्धि होती है और बहुत मंदिरों में पूजा आरतीकी सामग्री व पुजारी नौकर वगैरहके खर्च तथा भगवान्के आभूषण, मंदिरों का जीर्णोद्धारादि कार्य चलते हैं. येही देवद्रव्य की आवक के मुख्य साधन हैं. उनसे ही बहुत शहरों में और गांवडों में भगवान् की पूजा आरती के काम चलते हैं. जैन समाज में बहुत से लोग स्थानक-वासी व तेरापंथी हो जाने से बहुत मंदिरों में पूजा आरती नहीं होती, बडी भारी आशातना हो रही है अगर यह देवद्रव्य की आवक का साधन भी बंध हो जावे तो जिन जिन मंदिरों में इस साधनसे सेवा पूजा व जीर्णोद्धारादिक के काम चलते हैं उन उन मंदिरों में भी पूजा सेवा आरती जीर्णोद्धारादि काम रुक जांयगे और भगवान् की आशातना का बडा भारी अनर्थ खडा हो जावेगा. और जान बूझ कर प्रत्यक्ष में देवद्रव्यकी आवक का भंग करनेवालेको व देवद्रव्य के भक्षण करने वालेको श्राद्धविधि, आत्मप्रबोध वगैरह शास्त्रों में अनंत संसारी मिथ्यात्वी कहा है. खास विजयधर्म सूरिजी एक जगह लिखते हैं कि—पूजा आरती वगैरह के चढावे का रिवाज मंदिरों की रक्षाके लिये गीतार्थ पूर्वाचार्योंने और संघने मिलकर ठहराया है. दूसरी जगह फिर लिखते हैं कि—पूजा आरती के चढावे के रिवाज को शुरू करनेवाले पूर्वाचार्यों की मैं बार बार प्रशंसा करता हूं. तीसरी जगह लिखते हैं कि-भगवान् की भक्तिके लिये भले (अच्छे) नवे नवे उचित रिवाज स्थापन करो. चौथी जगह लिखतेहैं कि—भगवान्का भक्त होकर भगवान्को अर्पण किया हुआ द्रव्य खा जावे यह तो देखीता प्रत्यक्ष अन्याय है. पांचवी जगह लिखते हैं कि १५ कर्मादानादि कुव्यापार वर्जे कर देवद्रव्यकी वृद्धि करना, (पूजा आरतीके चढावेका रिवाज भगवान्की भक्ति, देवद्रव्यकी वृद्धि, भक्तोंका आत्मकल्याण करनेवाला व १५ कर्मादानादि कुव्यापाररहित और गीतार्थ आचरणा से उचितही है.) तो भी अब छट्ठी जगह अपने कथन में पूर्वा-

पर विरोध (विसंवाद) आने का विचार भूलकर लिखते हैं कि— पूजा आरतीका चढावा क्लेश निवारण के लिये है उस द्रव्य के साथ भगवान् का कोई संबंध नहीं है वो देवद्रव्य नहीं हो सकता. इस लिये साधारणखातेमें लेजावो उससे दुःखी श्रावक-श्राविकादिकके उपयोगमें आ सके. ऐसा लिखकर भोले जीवोंके पूजा, आरती वगैरहके चढावेपरसे भाव उतार दिये, भगवान् की भक्ति में अंतराय किया, देवद्रव्य की आवक में बडा भारी धक्का पहुंचाया, ऐसी प्ररूपणा से हजारों लोग संशय में गिर गये हैं. इसलिये बहुत लोगोंने चढावा बोलने का बंध कर दिया है. कदाचित् कोई बोलते हैं तो देते भी नहीं हैं उससे वो पापमें डूबते हैं. भविष्य में द्रव्यके अभावसे मंदिरों में पूजा आरती होना भी मुश्किल होगा. विजयधर्मसूरिजी अपनी यह बडी अनर्थ की करनेवाली प्ररूपणा को साबित कर सकते नहीं. पीछी खींचकर समाज की समाधानीभी करते नहीं और उन से इस बात का शास्त्रार्थ से खुलासा पूछनेवालों पर गालागाली, निंदा ईर्षा से समाज में क्लेश फैलाते हैं. तथा अपनी झूठी प्ररूपणाके पक्षमें भोले लोगोंको लानेके लिये पूजा आरती आदि चढावेके रिवाज को असुविहित अर्थात् अगीतार्थ अज्ञानियोंका चलाया हुआ ठहरा कर सुविहित गीतार्थ कलिकाल सर्वज्ञ श्रीहेमचंद्राचार्य वगैरह महाराजाओं की व तपगच्छ खरतरगच्छादि सर्व गच्छों के हजारों प्रभाविक पूर्वाचार्यों की तथा अभी सर्व गच्छोंके आचार्य, उपाध्याय, सर्व साधुमंडलकी बडी भारी आशातना कररहे हैं. और पूर्वाचार्योंके आचरणाकी बातको उडाकर आगम पंचांगी के नाम से बाल जीवों को बहकाते हैं. देखो शासन को लाभकारी सर्व संघ सम्मत गीतार्थ पूर्वाचार्योंकी आचरणाको न माननेवालों को या उत्थापन करनेवालों को तपगच्छ नायक श्रीमान् देवेंद्रसूरिजी महाराज विरचित '**धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति**' वगैरह शास्त्रों में **मिथ्या दृष्टि निन्हव** कहा है. विजयधर्म सूरिजीने गरीब श्रावकोंको देवद्रव्य

खिलाकर अनंत संसारी बनानेकी भाव हिंसाका बडा भारी अनर्थ खडा किया है, इत्यादि कारणोंसे या तो ' पूजा, आरती के चढावे क्लेश निवारण के लिये व उसका द्रव्य देवद्रव्य नहीं हो सकता यह रिवाज अमुक समय असुविहित अज्ञानियोंने चलाया है, ' इत्यादि अपने विसंवादी झूठे कथन को साबित करके बतावें अथवा अपनी प्ररूपणा को पीछी खींचकर समाज की समाधानी करें अगर साबित करके न बतावें और पीछी भी न खींचे तथा हमेशा साल दरसाल जगह जगह पर विशेष क्लेश बढाते रहें तो ये यद्यपि विद्वान् व आचार्यपदधारक हैं और साहित्य का प्रचार, जाहिर लेक्चर वगैरह कार्य करते हैं तो भी अभी व भविष्यमें शासनको हानिकारक होनेसे ~~संयमें रखनेके लायक नहीं हैं~~. इसबातका सर्व मुनिमंडल को और सर्व शहरों के सर्व संघको अवश्य विचार करना चाहिये, नहीं तो भविष्यमें जैसे स्थानकवासी व तेरापंथियों से मंदिरोंको, तीर्थोंको, व शासन को धक्का पहुंचा है, वैसेही इनसेभी पहुंचनेका कारण खडा होजावेगा और एकमत पक्ष जैसा होकर समाजमें हमेशा क्लेश होता रहेगा और देवद्रव्यकी बडी भारी हानि पहुंचेगी. उस पापके भागी [अपन क्यों बुरे बनें, करेगा सो पावेगा, ऐसी अभी] उनकी उपेक्षा करनेवाले होंगे.

जैन शासनकी मर्यादा.

सर्वज्ञ वीतराग भगवान्के अविसंवादी शासन में कोईभी साधु अपनी मतिकी कल्पना से एक शब्द मात्रभी शासन की मर्यादाके विरुद्ध प्ररूपणा करता तो पहिले उसको समझाकर रास्तेपर लानेमें आता था, कभी समझाने परभी नहीं मानता और अपनी कल्पना का आग्रह नहीं छोडता तो उसको निन्हव करके संघबाहर करनेमें आताथा. फिर कोईभी जैनी उसका सन्मान, संसर्ग, वंदन, पूजनादि कुछभी व्यवहार नहीं करताथा, इसलिये अविसंवादी शासनकी मर्यादा बराबर चली आती थी. निन्हवोंका अधिकार **उत्तराध्ययन** और **आवश्यकादि** सूत्रोंकी टीकाओं में प्रसिद्ध

ही है तथा निन्हवों का सत्कार करनेवालों के लिये **महानिशीथादि** आगमोंमें यहांतक लिखा है कि, साधु--साध्वी--श्रावक--श्राविका जो कोई परपाखंडीकी प्रशंसा करे, जो निन्हवोंकी प्रशंसा करे, जो निन्हवोंके अनुकूल भाषण करे, जो निन्हवोंके स्थानपर जावे, जो निन्हवोंके साथ शास्त्र संबंधी पद--अक्षर की प्ररूपणा करे, जो निन्हवोंको वंदन पूजन करे, जो निन्हवोंके साथ सभामें आलाप संलाप करे वो परमाधर्मी होवे, संसार में परिभ्रमण करे. निन्हवोंको किसी तरहकी भी सहायता देनेवाले तीर्थंकर गणधरादि महाराजाओंकी आशातना करने वाले होते हैं. इसलिये सम्यक्त्वधारी आत्मार्थियोंको **विशेषावश्यक** के वचनानुसार तो निन्हवों का मुंह देखनाभी योग्य नहीं है. **सूयगडांगसूत्र**के १३ वें अध्ययन की निर्युक्ति के प्रमाण से गीतार्थ पूर्वाचार्यों की निर्दोष आचरणाको नहीं माननेवाले को **जमालि** की तरह निन्हव कहा है. और देवद्रव्य की उचित रीतिसे वृद्धि करनेवालों को यावत् **तीर्थंकर गौत्र** बांधनेका फल **आत्मप्रबोधादि** शास्त्रों में कहा है. भगवान् की पूजा--आरती--स्वप्न-पालना--रथयात्रा वगैरह भक्तिके कार्यों के चढावों से देवद्रव्य की वृद्धि होती है, जैन शासन की उन्नति होती है और भक्ति से चढावे लेनेवालोंका कल्याण होता है. इस गीतार्थ पूर्वाचार्योंकी आचरणाका निषेध करनेवाला भी निन्हवोंकी पंक्तिमें गिनने योग्य है. उस निन्हवको जितनी सहायता देना उतनाही भगवान्का, शासनका, सर्व संघका गुन्हा करना है. उसका फल इस भवमें कायक्लेश, धननाश व अपकीर्ति और पर भवमें संसार में परिभ्रमण होता है. इसलिये आत्महितैषी सज्जनोंको ऐसा करना हितकारी नहीं है. विशेष क्या लिखें.

श्रीचतुर्विध सर्व संघ को अंतिम निवेदन.

विजयधर्मसूरिजी और उन्होंकी मंडलीवाले कहते थे कि–देखो, अंदाज ४०० साधुओं में आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, पन्यास, गणि

और बहुत विद्वान् मुनिजन मौजूद हैं, तो भी हमारे सामने देवद्रव्य के विवाद संबंधी शास्त्रार्थ करने को कोई भी खडा नहीं हुआ, इसलिये हमारी बात सत्य है, उन्होंका आग्रह झूठा है. एक आनंदसागर सूरिजी इन्दोरमें शास्त्रार्थ करनेको आये थे सो भी ठहर सके नहीं. डर से मांडवगढ तीर्थ की यात्रा के बहाने विहार कर गये, इत्यादि बातों से भोले लोगों को बहकाते थे. और जब तक मैंभी इन्दोर शास्त्रार्थ के लिये नहीं आया था तब तक तो मणिसागर शास्त्रार्थ करने को आता नहीं, आता नहीं इत्यादि बातें करते थे परंतु जब मैं शास्त्रार्थ के लिये इन्दोर उनके सामने आया तो उनके मुनिमंडल में से विद्वत्ता का व अपनी सत्यताका अभिमान रखनेवालों में से कोई भी साधु मेरे साथ शास्त्रार्थ करनेको खडा नहीं हो सका और जाहिर सभा में या खानगी में उन्होंने उनके स्थानपर न्याय केअनुसार शास्त्रार्थ करना मंजूर किया नहीं. किसी तरहसे भी आडी-टेढी बातों के झूठे झूठे बहाने लेकर शास्त्रार्थ से भगने के रस्ते लिये हैं. इसलिये अब मैं उन्होंकी झूठी झूठी प्ररूपणा की मुख्य मुख्य सब बातोंका निर्णय बतलाता हूं और सर्व मुनि महाराजाओंको व सर्व शहरोंके तथा सर्व गांवों के सर्व संघ को जाहिर विनंती करता हूं कि—इस निर्णय को शहरों शहर, गांवोंगांव और प्रत्येक देशमें जाहिर करें. उससे हजारों लोग संशय में गिरे हैं उन्होंका उद्धार हो, समाज का क्लेश मिटे और भगवान् की भक्तिके, देवद्रव्य की रक्षाके, वृद्धिके लाभके भागी हों. इति शुभम् ।

श्रीवीर निर्वाण सम्वत् २४४८. विक्रम सम्वत् १९७९ ज्येष्ट शुदी १. हस्ताक्षर परम पूज्य उपाध्यायजी श्रीमान् **सुमतिसागरजी** महाराज का

लघु शिष्य मुनि-**मणिसागर**, इन्दोर (मालवा).

ॐ

शासननायक श्रीवर्द्धमान स्वामिने नमः

देवद्रव्य का संक्षेप में साररूप निर्णय.

(साधारण खातेमें अभी द्रव्य की बहुत त्रुटि होनेका कारण और उसकी वृद्धि के उपाय वगैरह बहुत बातें आगे लिखने में आवेंगी. मगर यहां तो देवद्रव्य की आवक को साधारण खाते में लेजाने संबंधी श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी की अनुचित बातों का खुलासा लिखने में आता है.)

पाठकगण इसको पूरापूरा अवश्य बांचें।

१. स्वप्न उतारने का द्रव्य देवद्रव्य होता है या साधारण द्रव्य होता है ?

गृहस्थ अवस्था में भगवान् लोगोंको द्रव्यादि दान देते थे, वह द्रव्य लोगों के उपयोग में आसकता था. उसी तरह स्वप्न उतारने का व घोडीया पालना वगैरह कार्य भी भगवान् के गृहस्थ अवस्था की क्रिया रूप होने से उसका द्रव्य भी साधारण खातेमें रखना योग्य है. उस से सात क्षेत्रों में उसका उपयोग हो सके, यह कहनाभी सर्वथा अनुचित है.

१. देखिये, भगवान् तो राज्यधर्म व परोपकार दृष्टिसे लोगोंको द्रव्यादि दान देते थे, इस लिये वह द्रव्य लोगोंके उपयोग में आसकता था, मगर अपने लोग तो स्वप्न उतारने वगैरह कार्य भगवान् के उपर उपकार बुद्धिसे नहीं करते हैं, किंतु अनंत उपकारी; मोक्षदाता, वीतराग

भगवान् की सेवा भक्ति अपने आत्म कल्याण के लिये करते हैं, देखिये त्रिशलामाता के चौदह स्वप्नोंके अधिकार संबंधी कल्पसूत्र की ' कल्पद्रुम कलिका ' नामा टीका का पाठ :—

२ " **हे राजन्** ! चतुर्दंत गजावलोकनात् चतुर्धा धर्मोपदेष्टा भविष्यति, वृषभदर्शनाद् भरतक्षेत्रे सम्यक्त्वबीजस्यवप्ता भविष्यति, सिंह दर्शनाद् अष्टकर्मगजान् विद्रावयिष्यति, लक्ष्मीदर्शनाद् संवत्सरदानं दत्त्वा पृथ्वीं प्रमुदितां करिष्यति, तीर्थंकर लक्ष्मीभोक्ता च भविष्यति. पुष्पमाला दर्शनात् त्रिभुवन जना अस्य आज्ञां शिरसि धारयिष्यंति, चंद्र दर्शनात् पृथ्वीमंडले सकल भव्य लोकानां नेत्र हृदयाऽऽल्हादकारी च भविष्यति, सूर्यदर्शनात् पृष्ठे भामंडल दीप्तियुक्तो भविष्यति, ध्वज दर्शनाद् अग्रे धर्मध्वजः चलिष्यति, कलश दर्शनाद् ज्ञान-धर्मादि संपूर्णो भविष्यति, भक्तानां मनोरथ पूरकश्च. पद्मसरो दर्शनाद् देवा अस्य विहार काले चरण योरधः स्वर्णानां पद्मानि रचयिष्यंति, क्षीरसमुद्र दर्शनाद् ज्ञान-दर्शन-चारित्रादि गुण रत्नानामाधारः धर्म मर्यादा धर्ता च भविष्यति, देव-विमान दर्शनात् स्वर्गवासिनां देवानां मान्य आराध्यश्च भविष्यति, रत्नराशि दर्शनात् समवसरणस्य वप्रत्रये स्थास्यति, निर्धूमाऽग्नि दर्शनाद् भव्य जीवनां कल्याण कारी, मिथ्यात्वशीत हारी च भविष्यति.

अथ सर्वेषां स्वप्नानां फलं वदति. हे राजन् ! एतेषां चतुर्दश स्वप्नानां अवलोकनात् चतुर्दश रज्ज्वात्मक लोकस्य मस्तके स्थास्यति"

३ **भावार्थ**—हे राजन्! चारदांतवाला हाथी देखनेसे चार प्रकार के धर्मका उपदेश करनेवाला होगा, वृषभ देखनेसे भरतक्षेत्रमें सम्यक्त्व-रूप बीजके बोने वाला होगा, सिंह देखनेसे आठ कर्मरूप हाथियों का विदारन करनेवाला होगा, लक्ष्मी देखने से संवत्सरी दान देकर पृथ्वीको हर्षित करनेवाला और तीर्थंकररूप लक्ष्मीको भोगनेवाला होगा. पुष्पमाला

देखनेसे तीन जगत के लोग पुष्पमाला की तरह इनकी आज्ञा मस्तकपर धारण करेंगे, चंद्र देखनेसे पृथ्वी मंडलमें सर्व भव्य जीवों के नेत्र और हृदयको आल्हाद (हर्ष) उत्पन्न करनेवाला होगा, सूर्य देखनेसे उनके पीछे दीप्तियुक्त भामंडलको धारण करनेवाला होगा, ध्वज देखनेसे उनके आगे धर्मध्वज चलेगा, पूर्ण कलश देखनेसे ज्ञान-धर्मादि संपूर्ण गुणयुक्त और भक्त जनोंके संपूर्ण मनोरथोंका पूर्ण करनेवाला होगा पद्म सरोवर देखनेसे देवता इन्होंके विहारमें पेरोंके नीचे स्वर्णके कमल रचेंगे, क्षीर समुद्र देखनेसे ज्ञान-दर्शन-चारित्रादि गुण रत्नोंका आधार भूत और धर्म मर्यादा का धारण करनेवाला होगा, देव विमान देखनेसे चारों निकाय के स्वर्गवासी देवोंको मान्य करने योग्य और आराधन करने योग्य होगा, रत्नराशी देखनेसे केवल ज्ञान होने पर समवसरण के तीनगढ के मध्य भागमें विराजमान होनेवाला होगा, निर्धूम अग्नि देखनेसे भव्य जीवोंके कल्याण करनेवाला और मिथ्यात्वरूप शीतको नाश करनेवाला होगा.

अब सर्व स्वप्नोंकासाररूप फल कहते हैं, हे राजन् ! इन चौदह स्वप्नोंके देखनेसे आपका पुत्र चौदह राजलोक के मस्तकपर बैठनेवाला होगा, अर्थात् सर्व कर्म क्षय करके मोक्षमें जानेवाला होगा.

इस प्रकारसे कल्पसूत्रकी कल्पलता-सुबोधिकादि सर्व टीकाओंमें ऐसे ही भावार्थवाला पाठ समझ लेना.

४ अब देखिये पर्युषणापर्वमें प्रायः सर्व जगहपर कल्पसूत्र टीकाओं सहित बांचने में आता है, उसमें ऊपरका विषय संबंधी पाठ भगवान् महावीर प्रभुके जन्म अधिकार बांचने के दिन सुनने में आता है. उस दिन वीर प्रभुके ऊपर मुजब गुणोंकी स्मरणरूप भक्ति के लिये और देवद्रव्यकी वृद्धिके लिये स्वप्न उतारे जाते हैं, इसलिये उनका द्रव्य वीतराग प्रभुकी भक्तिके सिवाय अन्य खातेमें खर्च करना सर्वथा अनुचित है.

५ भगवान् के माता पिता जो उत्सव करते हैं, वह तीर्थंकर भगवान् वीतराग प्रभुकी भक्ति के लिये नहीं करते, किंतु ऐसा गुणवान् हमारे पुत्र हुआ है; हमारे कुलका उद्योत करेगा; हमारे कुलकी वृद्धि करेगा, इत्यादि गुणोंसे अपने पुत्रकी प्रीति से जन्मादि उत्सव करते हैं. और अपन लोग जो च्यवन कल्याणक संबंधी स्वप्न उतारने वगैरह का उत्सव करते हैं, वह राज्यपुत्र जानकरके राजकुमारकी भक्ति के लिये नहीं करते, किंतु तीर्थंकर भगवान् जानकर ऊपर मुजब वीतराग प्रभुके गुणोंकी भक्ति के लिये करते हैं. इसलिये भी उस संबंधी जो द्रव्य आवे वह द्रव्य देवद्रव्यरूप होनेसे मंदिरादिमें भगवान् की भक्ति में लगना योग्य है. जिसपरभी उस द्रव्यको साधारण खातेमें रखकर हरएक कार्यमें उपयोग करनेसे देवद्रव्यके नाशका और भक्षणका दोष आता है.

६ भगवान्का पालनामेंभी नारेल वगैरह रखकर वीरप्रभुकी स्थापना करने में आती है, पीछे भगवान् के पालने के नामसे चढावा होता है. पालने का चढावा लेनेवाले भी भगवान्का पालना समझकर चढावा लेते हैं मगर राजकुमारका पालना समझकर चढावा न तो किया जाता है, और न लियाही जाता है उससे उनका द्रव्य भी श्रीवीर प्रभुको अर्पण होता है. इसलिये वह देवद्रव्य ही गिना जाता है उनको साधारण खाते में कहना यह कितनी बडी अनसमझकी बात है.

७ जबतक भगवान् गृहस्थ अवस्था में रहें, दीक्षा न लेवें, तब तक उन्हों के माता पितादिक अपना पुत्र समझकर उनसे अपने पुत्रका व्यवहार रखते हैं. दीक्षा लेने बाद उनके माता पिता भी भगवान् समझकर वंदन पूजनादि व्यवहार करते हैं मगर भक्त जनों के आत्म कल्याण के लिये भगवान् की भक्ति करने में तो तीसरे भवमें तीर्थंकर नाम गौत्र बांधे तबसे ही वंदन पूजनादि करने योग्य भगवान् हो चुके

इसलिये देवलोक से माता के गर्भमें आये तबही " **समणे भगवं महावीरे पंच हत्थुत्तरे होत्था** " अर्थात् ' श्रमण भगवंत श्रीमहावीर स्वामी के पांच कल्याणक हस्तोत्तरा नक्षत्रमें हुए, ऐसा वचन खास सूत्रकारने आचारांग सूत्रमें, स्थानांग सूत्रमें और कल्पसूत्रादि आगमोंमें साफ खुलासा पूर्वक नैगम नयकी अपेक्षा से मूल पाठमें कथन किया है. इसी तरह से देवलोक से गर्भमें आनेके समय इन्द्रमहाराज भी तीर्थंकर भगवान् जान करके ही विधिपूर्वक पूर्ण भक्ति सहित " नमुत्थु णं " करते हैं, और जन्म समय मेरु शिखरपर स्नात्र महोत्सव तथा नंदीश्वर द्वीपमें अट्ठाई महोत्सव करते हैं. यह अधिकार कल्पसूत्रादिक में प्रसिद्ध ही है.

८ औरभी देखो, अपने लोग अभी वर्तमानमें जन्म संबंधी स्नात्र पूजाका महोत्सव करते हैं, वह तीर्थंकर भगवान् समझ करके ही करते हैं. उसमें फल, नैवेद्य या नगद रकम वगैरह जो कुछ चढाने में आती है, वह सब देवद्रव्यमें गिनी जाती है मगर जन्म संबंधी महोत्सव गृहस्थ अवस्था की क्रिया समझ कर उस द्रव्यका उपयोग अपने नहीं करसकते और अन्य किसीकोभी उसका उपयोग नहीं करवा सकते, जिसपरभी उसका उपयोग अपन करें, अन्यसे करावें, तो देवद्रव्यके भक्षण के दोषी बनें. तैसेही स्वप्न और पालना के कार्यभी गृहस्थ अवस्थाकी क्रिया समझकर उनका द्रव्य अन्य कार्योंमें लगावें तो देवद्रव्य की हानी करने के दोषी बनें.

९ औरभी देखो विचार करो, श्रेणिक राजाका जीव अभी तो प्रथम नरक में है, तीर्थंकर हुआभी नहीं है, आगामी उत्सर्पिणी कालमें तीर्थंकर होनेवाला है, अभी तो सिर्फ तीर्थंकर नाम गौत्र बांधा हुआ है तोभी उनकी प्रतिमा पद्मनाभ तीर्थंकर रूपमें उदयपुर वगैरह शहरों में पूजीजाती है, उनके आगे चढाया हुआ द्रव्य देवद्रव्य गिना जाता है, मगर अन्य कार्यमें उपयोग नहीं आ सकता.

१० पार्श्वनाथस्वामी तीर्थंकर तो अभी हुए हैं मगर जब उन्होंने तीर्थंकर नाम गोत्रभी बांधा नहीं था तबसे ही गई चौवीशी से ही भावी तीर्थंकर होनेवाले जानकर पार्श्वनाथस्वामिकी प्रतिमा तीर्थंकर रूपमें पूजना शुरू होगया था उनको चढाया हुआ द्रव्यभी देवद्रव्यमें ही गिना गया है.

११ अब विचार करना चाहिये कि तीर्थंकर हुएभी नहीं तोभी उन्हों की भक्ति के लिये चढाया हुआ द्रव्य देवद्रव्य होता है, तो फिर साक्षात् तीर्थंकर होगए उन्होंकी भक्ति के लिये स्वप्न उतारने वगैरहमें चढाया हुआ द्रव्य देवद्रव्य होवे उसमें कहनाही क्याहै? इसको साधारण खातेकहना यहतो प्रत्यक्षमें देवद्रव्यको अन्यखाते लेजानेका दोषी बनना है.

१२ अगर कहा जाय कि स्वप्न और पालना वगैरहका चढावा हरीफाई याने देखादेखीसे करते हैं इसलिये उसका द्रव्य साधारण खाते लेजाने में कोई दोष नहीं, ऐसा कहनाभी सर्वथा अनुचित ही है. क्योंकि देखिये—एक श्रावकने भगवान् की ८ प्रकार पूजा भणाई तो उनकी देखादेखी की हरीफाई से दूसरे ने १७ भेदी भणाई तो भी उनका द्रव्य देव द्रव्य होने से साधारण खातेमें नहीं हो सकता. और भी देखो—एक श्रावक ने गुरु महाराज को वस्त्र, कंबल, पुस्तकादि वहोराये, तो उनकी देखादेखीकी हरीफाईसे दूसरेने उससे भी बहुत विशेष वस्त्र, पात्र, कंबल, पुस्तकादि वहोराये तो भी वो गुरु द्रव्य होने से गुरु महाराज के ही उपयोग में आ सकता है मगर हरीफाई के नाम से साधारण नहीं हो सकता और अन्य किसी गृहस्थी के उपयोग में भी नहीं आ सकता. इसी तरह कोई भगवान् की भक्ति के लिये, कोई देव द्रव्यकी वृद्धि के लिये, कोई देखादेखी की हरीफाई के लिये, कोई नामके लिये, कोई समुदाय की शर्म वगैरह कोईभी कारण से स्वप्न, पालना, आरती, पूजा वगैरह कार्योंके चढावे बोले मगर यह सब कार्य भगवान्की भक्तिके लिये किये जाते हैं, उससे इनका द्रव्य देवद्रव्य होता है. इसलिये हरीफाईके

बहाने से साधारण कभी नहीं हो सकता. अगर हरीफाई के नाम से स्वप्नादिक के देवद्रव्यको साधारण खातेमें कर लिया जाय तो उसी तरह हरीफाई से मंदिर, उपाश्रय बनाये गये होवें उन्होंको गरीब गृहस्थियोंके रहने के घर बनाने का प्रसंग आने से धर्मनाश करने के महान् दोषकी प्राप्ति होगी. इसलिये ऐसा कभी नहीं हो सकता. और ऐसा कहनेवाला भी शास्त्रों के रहस्य को नहीं जाननेवाला होने से अज्ञानी ठहरता है. उनके लिखने से या कहने से धर्मनाश का हेतुभूत ऐसा अनुचित मार्ग आत्मार्थियों को अंगीकार करना कभी भी सर्वथा योग्य नहीं है.

१३ अगर कहा जाय कि स्वप्न उतारने का शास्त्र में तो नहीं लिखा फिर कैसे उतारे जाते हैं? इस बातका जवाब यह है कि शास्त्र में तो कल्पसूत्र को पर्युषणाके दिन शाम को प्रतिक्रमण किये बाद रात्रि में सर्व साधु काउस्सग ध्यान में खडे खडे सुनते थे और एक वृद्ध गीतार्थ सबको सुनाता था. ऐसा निशीथचूर्णि, पर्युषणाकल्प निर्युक्ति वृत्ति वगैरह शास्त्रों में खुलासा लिखा है, मगर श्रावकोंको सुनानेका कहींभी नहीं लिखा. तोभी गीतार्थ पूर्वाचार्योंने धर्मप्रवृत्तिका विशेष लाभ का कारण जानकर पर्युषणा पर्व में व्याख्यान समय सभामें बांचना शुरू किया, उससे ही आज पर्युषणामें इतनी धर्म की प्रवृत्ति अभी देखने में आती है. यह अधिकार कल्पसूत्रकी कल्पलता, कल्पद्रुमकलिका, सुबोधिकादि टीकाओं में प्रसिद्ध ही है. इसी तरह स्वप्न व पालना वगैरहके रिवाज भी भगवान् की भक्ति के लिये और देवद्रव्य की वृद्धि के लिये मंदिरों की सार संभार रक्षा जीर्णोद्धारादिक महान् विशेष लाभ के लिये गीतार्थ पूर्वाचार्यों के समय से चला आता है. धर्मवृद्धिके हेतुभूत गीतार्थ पूर्वाचार्योंकी आचरणाका रिवाज आत्मार्थियोंको मान्य करना ही श्रेयकारी है इसलिये 'शास्त्रमें स्वप्न उतारनेका नहीं कहा' ऐसा कहकर भोले जीवोंको भ्रममें गेरना और धर्मकार्यमें विघ्न करना, सर्वथा अनुचित

है, अतएव देवद्रव्यके भक्षण या विनाशसे अनंत संसार परिभ्रमणका भय रखनेवाले आत्मार्थियों को उचित है, कि स्वप्न और पालना वगैरह के देवद्रव्य को साधारण द्रव्य समझकर किसी प्रकारसे अंशमात्र भी अपने या अन्य के उपयोगमें लानेका विचारमात्र भी न करें.

१४ अगर कहा जाय कि स्वप्न उतारने वगैरह कार्य करने के पहिलेसेही शुरूवातमें उसका द्रव्य देवद्रव्यमें नहीं ले जानेका और साधारण खातेमें ले जानेका ठहराव कर दिया जावे तो पीछे कोई दोष नहीं आवेगा. यह कहना भी अन समझका ही है क्योंकि भगवान् की भक्तिमें कोई भी कल्पना नहीं हो सकती. जिसपरभी वैसा करे तो वो भगवान् की भक्ति नहीं, किंतु धर्मठगाई की धूर्ताई कही जायगी. भगवान् की भक्तिमें अर्पण करी हुई वस्तु आत्म कल्याण मोक्षरूप फल देने वाली है, उसमें अन्य कल्पनाकरनी अनुचित है. देखिये किसी श्रावकने अपने द्रव्यसे लाखों या करोडों रुपये खर्च करके मुकुटादि आभूषण बना कर भगवान्को अर्पण करदिये होवें वो सब देवद्रव्य हो जानेसे उसको काम पडे तब अपने या अन्य के उपयोग में लेने की पहिले करी हुई कल्पना नहीं चल सकती. वैसे ही स्वप्नादिकका द्रव्य भी भगवान् वीर प्रभु परमात्मा को अर्पण होता है वो सब देवद्रव्य हो जाने से उसमें पहिले करी हुई कल्पना कभी नहीं चल सकती. जिसपरभी अज्ञानवश कोई वैसा करेगा तो भगवान् से धर्मठगाई करनेका व देवद्रव्य के भक्षण करने का दोषी बनेगा.

१५ एक ही द्रव्यका उपयोग भगवान् की भक्तिमें या साधारण खाते में एक जगह पर हो सकेगा मगर दोनों जगह पर नहीं हो सकेगा. उसी द्रव्यसे भगवान् की भक्तिका लाभ ले लेना और उसी द्रव्यसे साधारण खाते का भी लाभ ले लेना यह कभी नहीं बन सकता. इसलिये भगवान्की भक्तिका लाभ लेना होतो साधारण खाते के लाभ लेनेकी आशा छोड दो

और साधारण खाते का लाभ लेना होतो भगवान् की भक्ति के लाभ की आशा छोड दो. दोनों बातें परस्पर विरुद्ध होने से एकसाथ एकही द्रव्यसे नहीं बन सकती. जिसमें भी साधारण खाते में बोला हुआ द्रव्य तो देवद्रव्य में जा सकता है मगर भगवान् की भक्ति के निमित्त बोला हुआ द्रव्य देवद्रव्य होनेसे साधारण नहीं हो सकता. इसलिये भगवान्की भक्ति वगैरह धर्म कार्योंमें पहिलेसे अन्य कल्पना करनेका बाल जीवोंको सिखलाने वाले धर्म के उच्छेदन करने के हेतुभूत बडे भारी अनर्थके दोषी बनते हैं. आज भगवान की भक्तिरूप स्वप्न के द्रव्यमें ऐसी कल्पना करी तो कल कोई भगवान् के मंदिर को गृहस्थीके घर बनाने की कल्पना करेगा तथा कोई अपनी आवश्यकता पडनेपर मंदिर बेचकर द्रव्य इकट्ठा करनेकी कल्पना कर लेवेगा. और कोई तो भगवान् को चढाए हुए चांवल, फल, नैवेद्य आदिक वस्तुओंमें या मुनियों को वहोराए हुए वस्त्र-आहारादि में भी वैसी कल्पना करके पीछे अपने गरीब भाईयों के उपयोग में लानेका धंधा ले बैठेगा. इससे तो धर्म की मर्यादा उल्लंघन करनेका महान् अनर्थ खडा होगा. इसलिये देवगुरुकी भक्तिरूप धर्मकार्य में तो एकही दृष्टि रखना योग्य है. भविष्यमें भयंकर अनर्थ की हेतुभूत ऐसी कल्पना करनेका किसी भी भवभीरूको योग्य नहीं है. इस बातका विशेष विचार तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयं कर सकते हैं.

१६ कई आचार्य उपाध्याय पन्यास व मुनिमहाराज भी स्वप्न उतारने के द्रव्यको ज्ञान खातेमें या साधारण खातेमें रखवाकर पुस्तक लिखवाने में या लायब्रेरी पाठशाला वगैरह कार्यमें और गरीब श्रावका-दिकको दिलाने वगैरह कार्यमें खर्च करवाते हैं, मगर ऊपरके वृतांतसे वह देवद्रव्य भक्षण व विनाशके दोषी बनते हैं इसलिये उन महाराजाओं को चाहिये कि आगेसे वैसा न करावें और अनाभोग से वैसा करवाया होवे तो उसको सुधारने का उपयोग करना योग्य है.

१७ अब सत्य तत्त्वाभिलाषी जनोंको मेरा यही कहना है कि भगवान् गृहस्थ अवस्था में दान देते थे वह तो परउपकार बुद्धि से देते थे, इसलिये लोगों के उपयोग में आ सकता था और अपन लोग तो स्वप्न उतारने वगैरहके कार्य भगवान् की भक्ति के लिये अर्पण रूप में करते हैं इसलिये इसका द्रव्य भगवान्की भक्तिमें ही लग सकता है. मगर अन्य खातेमें नहीं लग सकता. जिसपरभी अभी इसके द्रव्यको साधारण खातेमें लेजाने का जो आग्रह करते हैं वो लोग ऊपर मुजब भक्तिसंबंधी व्यवस्था को समझे बिना देव द्रव्यके भक्षण के दोषी लोगों को बनाते हैं और आप भी बनते हैं. यह सर्वथा ही अनुचित है.

१८ **ऊपरके लेखका सारांश**:—गृहस्थ अवस्थामें भगवान् नहीं मानकर सिर्फ राजकुमार ही मानकर उन के जन्मसंबंधी स्नात्र पूजाका महोत्सव करते होवें,उसमें चढाये हुवे फल नैवेद्य या नगदादि द्रव्य अपने उपयोग में लेसकते होवें ? तथा पद्मनाभादि तीर्थंकर महाराज अभी हुए भी नहीं हैं, सिर्फ नाम गौत्र बांधा है, उन्होंकी प्रतिमा के आगे चढाये हुए द्रव्यादि अपने उपयोग में आसकते होवें ? तबतो स्वप्न उतारनेका द्रव्यभी साधारण खातेमें करनेमें कोई हरकत नहीं है. मगर गृहस्थ अवस्था में भी भगवान् समझकर जन्म संबंधी स्नात्र पूजाका महोत्सव करते हैं उसमें चढाये हुवे द्रव्यादि देवद्रव्य होनेसे अपने उपयोग में नहीं आ सकते तथा पद्मनाभादिक की प्रतिमाको भी भगवान् समझकर उनके सामने चढाये हुए द्रव्यादि देवद्रव्य होनेसे अपने उपयोग में नहीं आसकते. उसी तरह श्रीवीरप्रभुको भी भगवान् समझकर उन्हों की भक्ति के लिये स्वप्न उतारे जाते हैं, उनका द्रव्य देवद्रव्य होने से साधारण खातेमें नहीं हो सकता. जिसपरभी कोई करेगा तो वो देवद्रव्य के भक्षण का दोषी बनेगा. यद्यपि स्वप्न भगवान् की माता ने देखे हैं मगर अपन

लोग तो भगवान् की भक्ति के लिये स्वप्न उतारते हैं इसलिये उसका द्रव्य देवद्रव्य होता है. उस द्रव्यको कोई स्वप्न खाते के नाम से रक्खे तो भी भगवान् की भक्ति के सिवाय साधारण खातेमें नहीं लग सकता.

१९ पाठकगण श्रीमान् विजयधर्म सूरिजी के विचारों का एक नमूना देखे अपने हाथ से श्रावकों को क्या लिखते हैं.

" श्री नयाशहेरथी लि. धर्मविजयादि साधु सातना श्रीपालपुर तत्र देवादि भक्तिमान् मगनलाल कक्कल दोशी योग्य धर्मलाभ वांचशो तमारो पत्र मल्यो छे. घी संबंधि प्रश्न जाण्या प्रतिक्रमण संबंधि तथा सूत्र संबंधि जे बोली थाय ते ज्ञान खातामां लेवी व्याजबी छे, सुपन संबंधि घीनी उपजनो स्वप्न बनाववां पारणुं बनाववुं विगेरेमां खरच करवो व्याजबी छे. बाकीना पइसा देवद्रव्यमां लेवानी रीति प्रायः सर्व ठेकाणे मालम पडे छे. उपधानमां जे उपज थाय ते ज्ञान खाते तथा केटलीक नाणां विगेरेनी उपज देवद्रव्यमां जाय छे विशेष तमारे त्यां महाराजश्री हंसविजयजी महाराज बीराजमान छे तेओश्रीने पूछशो. एक गावनो संघ कल्पना करे ते चाली शके नही. साधु साध्वी श्रावक श्राविका मली चतुर्विध संघ जे करवा धारे ते करी शके. आज काल साधारण खातामां विशेष पइशो न होवाथी केटलाक गाममां स्वप्न विगेरेनी उपज साधारण खाते लेवानी योजना करे छे परन्तु मारा धार्या प्रमाणे ते ठीक नथी. देवदर्शन करतां याद करशो. "

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजीने काशी (बनारस) में बहुत अभ्यास किया, दुनिया में फिर करके आये, बहुत शास्त्र व युक्तिवाद देखा. पहिले स्वप्न के द्रव्य को देवद्रव्य कहते थे. अब अपने पाहिलेके विचारों को बदल कर कल्पना मात्र से उसी द्रव्य को देवद्रव्य साथ संबंध नहीं रखने का कह कर साधारण खाते में लेजाने का लिखते हैं, भोले लोगों

को उपदेश करते हैं सो यह कौन से शास्त्र प्रमाण से या युक्ति से कहते हैं उसका खुलासा ऊपर की १९ कलमों के सब लेख के साथही करें. अगर बुद्धिही फिर गई हो तो इस बात में हम कुछ भी कह सकते नहीं. पाठकगण आप ही तत्त्व बात को विचार लेंगे.

श्रीमान्-विजयधर्म सूरिजी—ऊपर के लेखकी १९ कलमों को पक्षपात रहित होकर आप पूरीपूरी पढिये, न्याययुक्त सत्य होवे उनको ग्रहण करिये और स्वप्न व घोडीया पालने के चढावे के देवद्रव्य को साधारण खाते में ले जाने संबंधी आपकी अनुचित प्ररूपणा को पीछी खींचकर अपनी भूलका सर्व संघ समक्ष मिच्छामि दुक्कडं दीजिये नहीं तो उपरकी १९ बातोंका पूरापूरा खुलासा करिये. विशेष क्या लिखें.

२—पूजा आरती में चढावा क्लेश निवारणके लिये है या भगवान् की भक्ति के लिये है ?

श्रीमान् विजयधर्म सूरिजीने मंदिर में भगवान् की पूजा आरती की बोली के चढावेका मुख्य हेतु क्लेश निवारण का ठहराया है यह सर्वथा अनुचित है क्योंकि भगवान् की पूजा आरती के चढावे में मुख्य हेतु क्लेश निवारण का नहीं, किंतु भगवान् की भक्ति, देवद्रव्य की वृद्धि, जैन शासन का उद्योत और अपनी आत्मा के भावों की विशेष निर्मलता होने से परम कल्याणरूप मोक्ष की प्राप्ति का कारण है, देखिये :—

२० अपने अनुभव से भी यही मालूम होता है, कि बहुत भाविक जन अपने मनमें ऐसी भावना रखते हैं कि आज अमुक पर्वका दिवस है, इसलिये मेरी शक्तिके अनुसार आज १०–२०, या १००–२०० रुपये भगवान् की भक्ति के लिये देवद्रव्य में देना और आज तो

भगवान्‌की पहिली पूजा-आरती मैं करूं तो मेरा कल्याण-मंगल होवे, वर्षभर भगवान् की भक्ति में जावे इसी निमित्त से मेरा द्रव्य भगवान् की भक्ति में लगेगा तो मेरी कमाई की महेनत सफल होगी इत्यादि शुभ भावनासे भगवान् की भक्तिके लिये ही बोली बोलने का चढावा होता है.

२१ आज बडे पर्वका दिन है, महाभाग्यशाली होगा जिसकी न्यायपूर्वक सुकृत की कमाई होगी, और जिसका महान् पुण्य का उदय होगा, उस भाग्यशाली को आज भगवान् की पहिली पूजा-आरती करने का लाभ मिलेगा और उसका ही धन आज बडे दिन में भगवान् की भक्ति में लगेगा इस प्रकारसे चढावे के समय समाज की तर्फ से कहने में भी आता है इसलिये भी पूजा आरती वगैरह की बोली बोलनेका मुख्य हेतु भगवान् की भक्ति और देवद्रव्य की वृद्धि का ही सिद्ध होता है.

२२ भगवान्‌की पूजा आरतीके चढावेके समय भाव चढते रखो, नाणा (धन) मिलेगा मगर टाणा (अवसर) नहीं मिलेगा. आज अमुक महापर्वका दिवस है, लक्ष्मी अस्थिर है, भगवान्‌की भक्तिका लाभ लीजिए इत्यादि कथनसे भी भगवान्‌की भक्तिही देखनेमें आती है.

२३ पर्व के दिनोंमें बडे बडे आदमियोंको इकट्ठे होकर भगवान् की भक्तिके लिये बडा बडा चढावा बोलते हुवे देखकर गरीब आदमियोंके भाव भी बहुत निर्मल हो जाते हैं. मनमें विचार करते हैं कि धन्य है इन बडे आदमियों को, जिन्होंने पूर्व भवमें सुकृत किया है इसलिये इनको यहांपर सर्व प्रकार की सामग्री मिली है. इससे इतना द्रव्य खर्च करके भी पहिली भक्ति यह आज करते हैं, मैंने पूर्व भवमें सुकृत नहीं किया इसलिये गरीब हुआ हूं, प्रभु भक्ति के लिये ऐसी सामग्री मेरे को नहीं मिली. यदि पूर्व भवमें मैं भी सुकृत करता तो मेरेको भी इस भव में सर्व सामग्री मिलती तो मैं भी इस से ज्यादे द्रव्य भगवान् को

अर्पण करके आज ऐसी भक्ति का लाभ लेने को समर्थ होता. इस प्रकार अपनी आत्माकी निंदा और प्रभु भक्ति करनेवालों की अनुमोदना करनेमें आत्मा के भावोंकी विशेष वृद्धि होनेसे भगवान्की पूजा आरती किये बिना और चढावेकी बोली बोलकर उतना द्रव्य भगवान्को अर्पण किये बिना भी शुभ भावनासे भव्य जीव अपना आत्म कल्याण कर सकते हैं. उसमें प्रत्यक्ष तया मुख्य कारण भगवान्की पूजा आरती का चढावा ही समझना चाहिये.

२४ बहुत शहरोंमें और गांवडोंमें पर्वके दिन सर्व संघ मंदिरमें या उपाश्रयमें व्याख्यान समय इकट्ठा होता है. उस समय भगवान्की पूजा वगैरह का चढावा बोला जाता है, उस में परस्पर हजारों रुपयोंका चढावा बोलने का उत्साह देखकर कभी कभी अन्य धार्मिक लोगभी भगवान्की और भगवान्की भक्तिके लिये हजारोंका चढावा बोलनेवालों की बडी भारी प्रसंशा करते हैं कि देखो इन लोगोंको अपने भगवान्पर कितनी बडी भारी भक्ति है कि उसमें धनको तो कंकर के समान गिनकर भगवान्की पूजा भक्तिमें इतना द्रव्य अर्पण कर देते हैं इत्यादि जैन शासनकी प्रसंशा करानेका हेतुभूतभी चढावाही है, उसकी प्रसंशा करनेवालोंकोभी सम्यक्त्वकी प्राप्ति होनेरूप महान् लाभकाकारण होताहै.

२५ अगर कहा जाय कि पूजा आरतीके समय धनवान् निर्धन ऊपर आक्रमण न करें इसलिये चढावा करनेका रिवाज ठहराया है तो ऐसा कहनाभी सर्वथा अनुचित है. देखिये धनवान सेठिये बैठे हुएभी उन्हींके नौकर या अन्य साधारण आदमी थोडेसे दामोंमें चढावा लेकर भगवान्की पहिली पूजा आरती खुशीके साथ कर सकते हैं और धनवान् सेठिये पीछेसे पूजा आरती करते हैं. यह बात बहुत बार अपने प्रत्यक्षमें भी देखनेमें आती है, इसलिये पूजा आरती के चढावेमें मुख्य हेतु एक एक के ऊपर आक्रमण करनेरूप क्लेश निवारणका नहीं किंतु

भगवान्की भक्ति, देव द्रव्यकी वृद्धि और आत्माके कल्याण काही मुख्य हेतु है. इसलिये क्लेश निवारण का कहना प्रत्यक्ष झूठ है.

२६ अगर कहा जावे कि—चढावा होने से धनवान् सेठिये चढावा लेकर पहिली पूजा आरती कर लेते हैं उससे गरीब आदमियों को पहिली पूजा आरती का लाभ नहीं मिलता, इसलिये यह रिवाज अनुचित है. ऐसा कहना भी योग्य नहीं हैं क्योंकि देखो खास भगवान् के समवसरण में भी व्यवहार दृष्टि से राजा, मंत्री, सेठिये, सेनापति धनवान् लोग इत्यादि आगे बैठकर भगवान् की सेवा भक्ति पहिले करते थे और गरीब लोग पीछे बैठकर भगवान् की सेवा भक्ति पीछेसे करते थे मगर लाभ तो अपनी अपनी भावना के अनुसार सबको ही यथायोग्य मिलता था. इसी तरह धनवान् सेठिये चढावा लेकर पहिले पूजा आरती करें और गरीब लोग शांतिपूर्वक अपनी शुभ भावना से पीछे करें तोभी उस में कोई हरकत नहीं है. गरीब लोगों को तो पुण्यवानोंको चढावा लेकर पहिली पूजा करते देख कर, देवद्रव्य की वृद्धि और उनकी भक्ति देख कर अनुमोदना से विशेष लाभ लेना चाहिये. उस मे नाराज होने की कोई बात नहीं है. पहिली पूजा में और पीछे की पूजा में जियादा कम लाभ नहीं है, किंतु लाभ तो अपनी अपनी भावना के अनुसार है. तोभी चढावेसे पहिली पूजा करनेवालेको देवद्रव्यकी वृद्धिका जो विशेषलाभमिलताहै उसकी अनुमोदना करना योग्यहै. जिसके बदले नाराज होना यह तो बडी अज्ञानताहै, इसमें क्लेशकी कोई बातही नहींहै.

२७ पूजा आरती वगैरह के चढावे में धनवान् का या गरीब आदमीका कोई कारणही नहीं है. देखिये—धनवान्, लोभी तथा भगवान् की भक्तिका अंतराय कर्मवाला हो तो कुछ भी चढावा नहीं बोल सकता और गरीब आदमी दातार तथा भगवान् की भक्तिका लाभ लेनेवाला हो तो वो अपनी शक्ति और भावना के अनुसार चढावा बोल सकता है.

इसलिये भगवान् की भक्ति में धनवान् का और गरीब का भेद बतला कर भोले लोगोंको झगडेके मार्ग में गेरनेका लिखना सर्वथा अनुचित है.

२८ अगर कहा जावे कि दस बीस आदमी साथ में भगवानूकी पूजा करने को जावें तब पहिली पूजा कौन करे उस में झगडा हो जावे इसलिये उसका निवारण करने के लिये चढावा होता है. यह कहना भी सर्वथा अनुचित है, क्यों कि देखिये—जिस मंदिर में ग्रामादिक की जागीर से पूजा की सामग्री व जीर्णोद्धारादिक के लिये पूरीपूरी देव द्रव्य की आवक होवे और जिस मंदिर में कहीं कहीं पूजा आरती के चढावेका अभी रिवाज भी न होवे उस मंदिरमें १०-२० तो क्या मगर १००-२०० आदमी साथ में पूजा करने को जाते हैं तोभी सब कोई अपनी अपनी योग्यता मुजब अनुक्रमसे शांतिपूर्वक पूजा करते हैं मगर क्लेशका कोई कारण नहीं होता, तो फिर १०–२० आदमी में क्लेश कैसे हो सकता है. जिस जगह भाव पूर्वक शांतिसे अपनी आत्म निर्मलता के लिये तीन जगतके पूज्यनीय वीतराग परमात्माकी भक्ति करना है वहां तो क्लेशका कोई कामही नहीं है किंतु अनसमझ लोग मंदिरमें वीतराग प्रभुके दरबारमें भी क्लेश करलेवें तो उन्होंके कर्मोंका दोष है. चढावातो सीर्फ भगवानूकी भक्ति के लिये और देव द्रव्यकी वृद्धिके लिये पूजा करनेवालोंके जब भाव चढते होवें तब होताहै, अन्यथा नहीं हो सकता. इसलिये प्रभु पूजामें चढावा प्रत्यक्षही भक्ति का कारण है, क्लेशका नहीं. उसको क्लेश निवारण का कहना सर्वथा मिथ्या है. अगर किसी बेसमझने किसी जगहपर कभी क्लेश करभी लिया तो क्या हुआ. उसको सर्व जगह एवम् हमेशा क्लेशका कारण कहना कितनी बड़ी भूल है. इस बातको पाठकगण आपही विचार सकेते हैं.

३ भगवान्की पूजा आरतीके चढावे का द्रव्य देवद्रव्य के साथ संबंध रखता है या नहीं ?

भगवान्की पूजा आरतीकी बोली बोलनेका द्रव्य देवद्रव्यके साथमें संबंध नहीं रखता है ऐसा लिखकर विजयधर्मसूरिजीने उस द्रव्यको साधारण खातेमें लेजानेका ठहराया है, सो सर्वथा अनुचित है, देखिये :—

२९ जैसे मंदिर में भगवान् के सामने अक्षत (चांवल), फल, नैवेद्य (मिठाई) वगैरह चढाने में आते हैं, उन में स्वाभाविक ही अर्पण बुद्धि होती है, वे सब देवद्रव्य के साथही संबंध रखते हैं. वैसेही पूजा आरती वगैरह के चढावे में भी जितना द्रव्य बोला जावे उतने द्रव्यमें ऊपर के कारण से स्वाभाविकही भगवान् को अर्पण करने की बुद्धि होती है. इसलिये वो सब द्रव्य देवद्रव्यके साथ पूरा पूरा दृढ संबंध रखता है.

३० मंदिरमें भगवान्के सामने साथिये ऊपर या खाली पाटेके ऊपर जितना द्रव्य चढानेके लिये रखखाजावे उतना भगवान्के संबंधसे वो देवद्रव्य होता है, वैसेही आरती पूजामें जितना द्रव्य देनेका बोलें उतना द्रव्य भगवान्के साथ संबंध रखता है. इसलिये वो सब देवद्रव्य होता है.

३१ अनंत उपकारी वीतराग प्रभूकी भक्तिमें जितना द्रव्य अर्पण करूं उतनाही थोडा है, ऐसी भावनासे ही पूजा, आरती वगैरह के चढावे होते हैं. इसलिये उनका द्रव्य देवद्रव्यके साथ संबंध रखता है.

३२ जितने चढावे होते हैं, वे सब प्रसंगानुसार संबंधवाले होते हैं इसलिये जिस प्रसंग से जिसके संबंधमें चढावा किया जावे उसका द्रव्य उस चढावे के साथ संबंध रखनेवाले स्थान के खाते में जाता है. देखिये, किसीने पर्युषणा पर्वके दिनों में कल्पसूत्रको अपने घर रात्रि जागरण करने के लिये लेजानेका चढावा लिया तो वह स्वाभाविक तयाही ज्ञान खाते के साथ संबंध रखता है, इसलिये उसका द्रव्य ज्ञान

खातेमें ही जावेगा तथा किसीने भक्तिवश गुरु के सामने कुछभी द्रव्य चढाया होवे अथवा गुरुको देनेका कहा होवे तो वो द्रव्य गुरु खाते के साथ संबंध रखता है, इसलिये गुरु द्रव्य कहा जाता है. यद्यपि गुरुको द्रव्य रखने की शास्त्रोंकी आज्ञा नहीं है, तोभी उस द्रव्य से वस्त्र, पात्र, कंबलादि वस्तूएं गुरुको बहोरा सकते हैं. या गिलान (रोगी) साधुके औषधादिक के उपचारमें खर्च करसकते हैं. इसी तरह मंदिरमें भगवान्‌के सामने भगवान् की पूजा आरती वगेरह भक्तिके लिये ही चढावे होते हैं वे सब भगवान्‌के साथ संबंध रखनेवाले होतेहैं. उनसे उनका द्रव्य भगवान्‌को अर्पण होता है. इसलिये वो सब द्रव्य देवद्रव्यही कहा जाता है.

३३ अगर कहा जाय कि जैसे शांतिस्नात्र-प्रतिष्ठादिक कार्यों में भगवान् की पूजा के लिये मिठाई बनानेमें आती है, उसमेंसे जितनी पूजामें जुरूरत पडे उतनी भगवान् को चढाते हैं और शेष बाकीरहीहोवे उसका अपन लोग भी उपयोग कर सकते हैं. तैसेही भगवान् की पूजा आरती के चढावेका द्रव्यभी भगवान् के कार्यमें खर्च करें और साधारण खातेमें रखकर मिठाई की तरह अपने या अन्य किसी के उपयोगमें लेवें तो कोई दोष नहीं है, ऐसा कहना भी सर्व प्रकार से अयोग्य ही है. क्योंकि देखो शांतिस्नात्र–पूजा–प्रतिष्ठा में जो मिठाई बनानेमें आती है, वह तो वहांपर लडके वगैरह कोई झूठी न करने पावें या मलिन शरीर, वस्त्रादिवाली स्त्री वगैरह कोई वहां जाने न पावे इसलिये अलग चौका बनवाकर सीर्फ पवित्रता शुद्धताके लियेही अपने या संघके द्रव्यसे बनाने में आती है, उसमें से जितनी भगवान् की भक्तिके लिये पूजामें चढाने में आवे उतनी भगवान् को अर्पण होती है. और शेष (बाकी) रही हुई अपने उपयोगमें ले सकते हैं. मगर पूजा आरतीके चढावेमें तो उनका सब द्रव्य भगवान्‌को अर्पण हो जाता है, इसलिये वह सब देव द्रव्यही ठहरता है. उसमें से थोडासा अंश मात्रभी अपने उपयोगमें नहीं

ले सकते हैं. इसलिये अपने द्रव्यसे बनीहुई मिठाई की बात भोले जीवों को बतलाकर पूजा आरती के चढावे के देवद्रव्य को साधारण खाते में करके सर्व कार्योंके उपयोगमें लानेका कहनेवाले अज्ञानी समझने चाहियें.

३४ अगर कहा जाय कि जैसे भगवान्‌की अंगरचना (आंगी) करते हैं तब भक्त लोग अपने घरके लाखों या करोडों रुपयों की कीमत के जवाहिरात के आभूषण वगेरह भगवान् के अंग ऊपर चढाते हैं और पीछे आंगी उतारने के बाद वे सब आभूषण वगेरह अपने घर को लेजाते हैं, उसी तरह भगवान् की पूजा आरतीके चढावेका द्रव्यभी यद्यपि भगवान् की भक्ति निमित्त बोलते हैं और वो भगवान् को अर्पण होता है तोभी पीछा लेकर साधारण खातेमें रखनेसे सबके उपयोगमें आवे उसमें कोई दोष नहीं, ऐसा कहना भी उचित नहीं है. क्योंकि देखिये, भगवान् की अंग रचनामें तो सीर्फ अंगरचना रहे तब तक एक दिनके लिये अपने घरके आभूषणादिक भगवानकी भक्ति में अल्पकालके लिये रखतेहैं मगर हमेशाके लिये अर्पण नहीं करते इसलिये करार मुजब समय पूरा होने बाद पीछे अपने घरको लेजासकते हैं. मगर भगवान्‌की पूजा आरतीके चढावेका द्रव्य तो भगवान्‌की भक्ति में आभूषणादिक की तरह अल्पकाल के लिये वापरने को नहीं देते किंतु पूज्य परमात्मा समझकर भक्तिसे हमेशा के लिये अर्पण करते हैं. उस द्रव्यको साधारण खातेमें रखकर हरएक कार्यमें उपयोग नहीं करसकते. भक्तिमें अल्पकालके लिये वापरनेको दिये हुए आभूषणोंके दृष्टांतसे भगवान्‌की पूजा आरतीके अर्पण किये हुए देवद्रव्यको साधारण खातेमें लेनेका कहना प्रत्यक्षही झूठ है.

३५ अगर कहा जाय कि पूजा आरती के चढावे का आदेश संघ देता है, इसलिये उस द्रव्यका मालिकभी आदेश देनेसे संघही ठहरता है. इसलिये संघ चाहे वहां उस द्रव्यका उपयोग कर सकता है, यह कहनाभी सर्वथा अनुचितही है क्योंकि देखिये जैसे संसार व्यवहारमें

प्रजाके अगेवान् पंचलोग लोगोंको लाखों करोडों रुपयोंका लेने देनेका आदेश (हुक्म) करते हैं मगर मालिक नहीं हो सकते. तैसेही धर्म व्यवहारमें भी भगवान् की भक्ति के लिये पूजा, आरती, स्वप्न, पालना वगैरह कार्योंके चढावेका आदेश देनेमें संघतो विश्वासपात्र ट्रस्टीपनेमें स्वयंसेवक मंडलरूप होने से आदेश दे सकता है, उस द्रव्यकी उघाई कर सकता है, भगवान् की भक्तिमें उस द्रव्यका उपयोग कर सकता है और उस द्रव्यकी रक्षा सार संभालभी कर सकता है मगर आदेश देनेसे मालिक नहीं हो सकता तथा भगवान् की भक्ति के सिवाय अन्य किसी जगह अपनी मरजी मुजब उस द्रव्यका उपयोगभी किसी तरह से नहीं कर सकता. तिसपर भी अज्ञानवश या किसी के भ्रमाने से उस देवद्रव्यको आदेश देनेके बहाने साधारणखातेका समझकर संघ किसीभी अन्य कार्य में उपयोग करे तो वो विश्वासपात्र ट्रस्टीपने में स्वयंसेवक मंडलरूप देवद्रव्यका रक्षक नहीं कहा जावेगा किंतु विश्वासघात से देव द्रव्यका नाश करनेवाला ही कहा जावेगा. और देवद्रव्यके नाश करने वालेको शास्त्रकार महाराजों ने अनंत संसारी कहा है. इसलिये बिचारे भोले भक्तोंको भगवान् की भक्ति व देवद्रव्य की रक्षा करने से मोक्ष गामी बनाने के बदले देवद्रव्यके नाश करनेवाले अनंत संसारी बनानेका उपदेश देनेवाले संघ के हितकर्ता नहीं किंतु अहित (द्रोह) करनेवाले समझने चाहियें.

३६ औरभी देखो विचार करो जैन शासन की उन्नति के लिये देव गुरु धर्म की भक्ति के लिये व अपने आत्म कल्याण के लिये संघ किसीको मंदिर बनानेका, प्रतिमा बैठानेका, प्रतिमाजीके आभूषणादिक बनाने का और किसीको साधु होनेका या साधुको वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण (ओघा) तथा आहारादि वहोराने का आदेश (हुक्म) देता है. उनसे भक्तिके और उन कार्योंकी अनुमोदनाके लाभका भागी होता है. मगर उन्हीं कार्योंका (वस्तुओंका) मालिक कभी नहीं हो सकता.

इसी तरह संघ पूजा आरती वगैरह कार्योंके चढावे का आदेश देता है उससे भक्तिके व अनुमोदना के लाभका भागी हो सकता है, मगर उस द्रव्य का मालिक कभी नहीं हो सकता.

३७ अगर कहा जाय कि—पहिली पूजा आरतीके ऊपर अपना हक्क जमाने के लिये चढावा बोलते हैं, इसलिये उसके द्रव्यके साथ भगवान्‌का कोई संबंध नहीं हो सकता, ऐसा कहना भी प्रत्यक्ष ही झूठ है. देखो—चढावा लेनेवाले भगवान्‌की पहिली भक्तिका लाभ लेने के इरादेसे ही चढावा लेते हैं. यद्यपि भगवान्‌की पूजा आरतीमें लाभ तो है ही मगर पर्वके दिवसोंमें चढावा लेकर पहिली पूजा आरती करने वालोंके विशेष अधिक शुभ भाव होते हैं. अपने मनमें विचार करते हैं कि आज हमारे अहोभाग्य हैं, इतने बडे बडे आदमी मौजूद होनेपरभी प्रभुकी पहिली पूजा आरती का लाभ हमको मिला. इसलिये आज हमारे भाग्य खुले, भगवान्‌की हमारे ऊपर बडी भारी कृपा हुई, आज हमारे दुःख, दरिद्र, रोग, शोकादिक सब गये, हमारी आत्मा पवित्र हुई इत्यादि शुभ भावना चढावा लेकर पहिली पूजा आरती करने से ही बढती है. और कारण से कार्य होता है. इसलिये चढावा लेकर पूजा करनेसे भगवान्‌की भक्ति के, देवद्रव्यकी वृद्धिके व विशेष विशुद्ध भाव चढनेसे महान् निर्जराके बडे बडे लाभ मिलते हैं, और आत्म शुद्धिके, मोक्ष प्राप्तिके परम कल्याणरूप उत्कृष्ठ हेतु हैं मगर अपना हक्क जमानेका हेतु नहीं. इसलिये चढावेके द्रव्यके साथ खास भगवान्‌काही संबंध है और हक्क जमाकर कोई जागीरी नहीं लेना है किन्तु भक्ति से भगवान्‌को अपना द्रव्य अर्पण करना है. तिसपरभी हक्क जमाने के नामसे भोले लोगोंको बहकाना अनुचित है.

३८ देखादेखी की हरीफाई के नामसे पूजा, आरतीके चढावेके द्रव्यको देवद्रव्य से निषेध करना यहभी बडी भूल है. क्योंकि देखिये— अपने नामके स्वार्थ के लिये पुस्तक छपवाने के लिये या कोईभी

संस्था के फंड में रकम भरवाने के लिये एक सेठियेने ५००) रुपये भरे, दूसरा सेठिया १००) रुपये भरने लगा, तब अमुक सेठने ५००) रुपये भरे हैं, आप तो उनसे बडे हैं, नामी हैं, दातार हैं, दानवीर हैं, इस लिये आपको तो उनसे दूने या चौगुने भरने चाहियें, उन से कमती भरना आपको शोभता नहीं. आप अभी कमती भरेंगे, आपकी देखा देखी दूसरे लोगभी कमती कमती भरेंगे तो इस कार्य को बडा भारी धक्का पहुंचेगा, आप विचार तो करिये इस कार्य में बडा लाभ है, इस भव में नाम और पर भव में सद्गति इत्यादि बातों से आपही सेठिये लोगोंको देखादेखी, होडाहोडी, हरीफाई सिखलाकर उंचे चढाकर अपना स्वार्थ पूरा करते हैं. परंतु मंदिरमें वीतराग भगवान्की भक्तिकेलिये लोग अपनी शुभ भावनासे पूजा आरती का चढावा बोलते हैं उनको देखा देखी, होडा होडी, हरीफाईके नाम से बुरा बतलाते हैं, उसपरसे भोले लोगोंके भाव उतारते हैं, भगवान् की भक्ति में अंतराय बांधते हैं, देवद्रव्य की आवक में हानि करते हैं, यह कितने बडे भारी अन्यायकी बात है.

३९ और भी देखो इस कालमें सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, देवपूजा, तीर्थयात्रा, साहमिवात्सल्य, व्याख्यान श्रवण,प्रभावना, गुरुभक्ति, उपवास, छठ्ठ, अठ्ठमादि तपस्या, व्रत, पच्चक्खाण, मंदिर, उपाश्रय, धर्मशालादि बनाने और पाठशाला, विद्यालय, कन्याशाला, लायब्रेरी, गुरुकुलादिक संस्थाओं के फंडमें रकम भरवाने वगैरह बहुत धर्म कार्य देखादेखी से विशेष होते हैं और खास आपही ‘ अमुक ऐसा करता है तूं क्यों नहीं करता है ’ इत्यादि देखादेखी के उपदेश देकर लोगोंसे धर्म कार्य करवाते हैं. उनमें जैसे कार्य करें वैसे शुभपरिणामों से लोग लाभभी उठाते हैं. और पहिलेभी राजा,महाराजा, चक्रवर्ती,सेठ, सेनापति वगैरह महापुरुषों के साथमें हजारों या लाखों लोग उन्होंकी देखादेखी से संयम धर्म अंगीकार करते थे और उससे ही अपना आत्मसाधन कर लेते

थे. यह बात तो शास्त्रप्रमाणों से प्रत्यक्ष ही देखनेमें आती है तिसपरभी विजय धर्म सूरिजी भगवान् की पूजा आरती के चढावे के देव द्रव्यको देखादेखी के नामसे निषेध करते हैं सो यह बडी भूल है.

४० अगर कहा जाय कि पूजा आरती के चढावे भगवान् की भक्तिके लिये देवद्रव्यकी वृद्धिके लिये करनेमें आते हैं तो फिर गांवगांवमें शहर शहरमें उनके ठहरावमें फरक क्यों देखा जाता है? इस बातका जवाब यह है कि देखो खास २४ ही तीर्थंकर महाराज भव्य जीवों के हित के लिये मोक्ष मार्गका उपदेश देते थे मगर उनमें भी क्रियाके भेद होने से २२ तीर्थंकर महाराजोंके साधु सवालक्ष रुपयोंके मूल्यवाली रत्न-कंबल व पंचवर्णके बहुमूल्य वस्त्र ग्रहण करते थे और आदि अंतके दो तीर्थंकर महाराजोंके साधु अल्प मूल्यवाली कंबल व जीर्ण प्रायः श्वेतमानो पेतवस्त्र ग्रहण करते हैं. इसी तरह प्रतिक्रमण, विहार, महाव्रतादिक उन्होंकी क्रिया में पुरुष विशेष से बाह्य भेद देखे जाते हैं मगर सबका ध्येय तो मोक्ष साधन का एकही है तथा पर्युषणा पर्वमें कल्पसूत्र के वरघोडे चढानेमें, व्याख्यान श्रवण करनेमें, प्रभावनादि करनेमें गांवोगांव शहरों शहरमें अलग अलग रिवाज देखनेमें आते हैं. मगर सबका ध्येय तो कल्पसूत्र पूरा सुननेका व पर्व आराधन का एकही है. औरभी देखो विचार करो साधुओं के व श्रावकोंके हमेशा करनेकी खास जुरूरी क्रिया भी कालदोष से वा गच्छादि भेदसे अलग अलग देखनेमें आती है, तो भी उसमें मोक्ष प्राप्तिके लिये सबका ध्येय तो एकही है. इसी तरह पूजा आरती के चढावे में भी गांवगांव के संघ के अनुकूल होवे, भगवान् की भक्ति विशेष होवे, देवद्रव्य की आवकमें सुभीता होवे वैसे अलग अलग रिवाज देखनेमें आतेहैं. मगर सबका देवद्रव्यकी वृद्धिरूप ध्येय तो एकही है. इसलिये पूजा आरती के चढावे के अलग अलग रिवाज देखकर कुतर्क करना और भोले जीवोंको भ्रममें गेरना यह बडी भूल है.

४१ ऊपर के लेख का सारांशः—दूसरे प्रकरण की २०से २८ तक ९ कलमों के लेख से तथा तीसरे प्रकरण की २९से ४१ तक १३ कलमों के लेख से यह बात अच्छी तरहसे साबित होती है कि भगवान्‌की पूजा आरती वगेरहके चढावे केवल प्रभुभक्तिके लिये, देवद्रव्यकी वृद्धिके लिये, व अपने आत्महितके लिये करनेमें आते हैं और उनका सब द्रव्य भगवानको अर्पण होता है, वो सब देवद्रव्यके साथ संबंध रखता है. इसलिये चढावे का जितने द्रव्यसे आदेश लेवें उतना द्रव्य उसी समय से ही देवद्रव्य होजाता है. उसके बाद जितना विलंबसे देवे उतनाही व्याजका दोष लगता है, यह बात तो सर्व जैन समाज में प्रसिद्धही है. जिसपरभी ' पूजा आरती के चढावे क्लेश निवारणके लिये हैं और उनका द्रव्य देवद्रव्यके साथ संबंध नहीं रखता है, ' ऐसा लिखकर उस द्रव्यको साधारण खातेमें लेजाने संबंधी विजयधर्मसूरिजी का व उन्होंके शिष्यादि अनुयायियों का कहना, लिखना व उपदेश करना प्रत्यक्षही झूठ है. और भोले जीवों के भगवान्‌की भक्तिमें, आत्म कल्याण में विघ्न डालनेवाला व देवद्रव्यको हानि कारक होने से संसार वृद्धि का हेतुभूत बडेही अनर्थ का करनेवाला है इसलिये वो सब यदि भवभीरू आत्मार्थी होवें तो उन्होंको अपनी भूलका सर्व जैन संघके समक्ष मिच्छामि दुक्कडं देकर शुद्ध होना योग्य है, आगे उन्होंकी इच्छाकी बात है.

विजयधर्मसूरिजी खास लिखते हैं कि—भगवान्‌को अर्पण किया हुआ देवद्रव्य किसी अन्य जगह नहीं लग सकता तो फिर पूजा आरती वगेरह चढावेमें अर्पण किया हुआ देवद्रव्यको साधारण खातेमें लेजानेका फजूल झूठा आग्रह करके देवद्रव्य के विनाशसे संसार परिभ्रमणका भय क्यों भूल गये हैं, इस बातका विशेष विचार पाठक गण आपही करलेंगे.

---

४ अभी देवद्रव्यकी वृद्धि बहुत होगई है या नहीं ?

देवद्रव्य की वृद्धि बहुत होगई है इसलिये अभी देवद्रव्यकी वृद्धि करनेकी जरूरत नहीं है, ऐसा विजयधर्मसूरिजीका लिखना सर्वथा झूठ है.

४२ पहिले राजा, महाराज, बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती, शैठ, सेनापति, सार्थवाह वगैरह लाखों, करोडों, या अरबों रुपये अपने घरसे खर्चकरके जीर्णोद्धारादि कार्य करते थे, और मोती, माणिक्य, स्वर्ण, रत्नादिकसे भगवान् की हमेशा पूजा करते हुए उनसे देवद्रव्यकी वृद्धि करते थे तथा स्वर्ण के जिनमंदिर व रत्नोंकी जिन प्रतिमा भरवातेथे, **संप्रति राजा** जैसे महान् पुण्यशाली पुरुषने **सवालक्ष** जीर्णोद्धार करवाये, **सवाकरोड** जिन बिंब भरवाये, उनकी सार संभाल प्रभू भक्ति की व्यवस्थाके लिये करोडों रुपयों की अपने राज्यकी वार्षिक आवक खर्च की थी तथा उस समय जैन समाजमें हजारों करोड पती सेठ साहुकार अपने घरके करोडों रुपये भगवान् की भक्तिमें खर्च करनेवाले मौजुद थे, उस समयभी भक्तजनों के भगवान्की भक्तिमें व आत्मकल्याणमें विघ्न डालने रूप अभी देवद्रव्यकी वृद्धि बहुत होगई है अब उसकी वृद्धि करनेकी जरूरत नहीं है. ऐसा कहनेका किसीनेभी साहस नहीं किया था, तिसपरभी अभी इस पडते कालमें विजयधर्म सूरिजी देवद्रव्यकी वृद्धि बहुत होगई है अब उसकी वृद्धि करनेकी जरूरत नहीं है, ऐसा लिखकर देवद्रव्यकी वृद्धि करनेवाले भक्त लोगोंके आत्म कल्याण रूप भगवान् की भक्तिमें व जीर्णोद्धारादि कार्योंमें विघ्न डालते हैं यह बडी भारी भूल है, पूर्व समयकी अपेक्षा से अभी देवद्रव्य बहुत कम है.

४३ अभी हिन्दुस्थानमें अनुमान ३६ हजार जिन मंदिर मौजुद कहे जाते हैं उन्हों के जीर्णोद्धारादिक कार्योंमें अभी अनुमान ४० या ५० करोडरुपयों का खर्च होसके और तीर्थ क्षेत्रादि सर्व शहर तथा सर्वगांवडोंके जिनमंदिरोंमें आभूषणादि व रोकड सब मिलकर अनुमान

३-४ करोड देवद्रव्य होगा उस अपेक्षा सेभी अभी देवद्रव्य बहुत कम है, जिसको ज्यादे कहके उसकी आवक को धक्का पहुंचाना योग्य नहीं है.

४४ हिन्दुस्थानमें सर्व जगहके जिन मंदिर मिलकर अनुमान २-३ लाख पाषाण के जिन बिंब और पंच तीर्थी, चौवीसी, सिद्धचक्र व चरण पादुका तो लाखों की संख्या में मौजुद हैं, उन्हों की पूजा, आरती में कममें कम अनुमान ८-१० लाख का वार्षिक खर्च लगे और पूजा, आरती, स्वप्न, पालना, रथ यात्रा वगैरह के चढावे तथा भंडारादिक की आवक में सब मिलकर अनुमान ३-४ लाख की वार्षिक आवक है, इस हिसाबसे भी देवद्रव्य बहुत कम है इसलिये मेवाड, मारवाड, वगैरह देशोंमें बहुत जिन मंदिर अपूज रहते हैं यह बाततो जाहिर ही है, तिसपरभी देवद्रव्यको बहुत बतलाना प्रत्यक्ष झूठ है, अगर इस अल्प आवक को भी बहुत कहकर बंध करदी जावेगी तो आगेको मंदिरोंकी, जिन बिंबोंकी व तीर्थोंकी कैसी व्यवस्था होगी उसका विचार सर्व संघ आपही करसकता है.

४५ अगर कहा जाय कि बम्बई-अमदाबाद वगेरहमें देवद्रव्य बहुत है इसलिये अभी देवद्रव्यकी वृद्धि करनेकी जरूरत नहीं है. ऐसा कहना भी अनुचितही है, क्योंकि दोचार जगह देवद्रव्य ज्यादे देखकर सर्व जगह देवद्रव्यको ज्यादे कहना यह बडी भूल है. बम्बई, अहमदाबाद के देवद्रव्यसे हिन्दुस्थान भरके सब मंदिरोंका व सब तीर्थों का काम कभी नहीं चलसक्ता देखिये जैसे २-४ साधुओं को विद्वान् देखकर कोई कहेकि अब विद्वान् बहुत होगये हैं, अब विद्या अभ्यास करनेकी, उसके पीछे द्रव्य खर्च करवानेकी व परिश्रम उठानेकी कोई जरूरत नहीं. तथा २-४ धन वान् गृहस्थोंको देखकर कोई कहे कि अबतो धन बहुत होगया है अब धन कमाने की किसीको जरूरत नहीं हैं ऐसा कहनेवाले को जैसा निर्विवेकी समझा जाता है, तैसेही २-४ जगह देवद्रव्य को विशेष देखकर सर्व

जगह देवद्रव्य बहुत होगया अब देवद्रव्यकी वृद्धि करनेकी जरूरत नहीं है, ऐसा कहने वालोंकोभी वैसेही निर्विवेकी समझने चाहिये. अगर बम्बई, अहमदाबादमें देवद्रव्य बहुत होगया होवे तो उसको अन्य तीर्थक्षेत्रोंमें व मारवाड, मेवाड, मालवा वगेरह देशोंमें जिन मंदिरों के जीर्णोद्धारादि कार्योंमें योग्यता मुजब खर्च करनेका उपदेश देना, और प्रबन्ध करवाना योग्य है परंतु बहुत कहकर निषेध करना योग्य नहीं है.

४६ अगर कोई कहे कि देवद्रव्यकी बहुत जगह गेरव्यवस्था होरही है इसलिये अब उसको बढानेकी जरूरत नहीं है, ऐसा कहना भी उचित नहीं है. क्योंकि बहुत जगह देवद्रव्यका अभाव होनेसे पूजा आरती नहीं होती, बहुत जिन मंदिर जीर्ण होगये हैं, उन्होंका उद्धारभी नहीं होसकता तथा बहुत जगह देवद्रव्यकी अच्छी व्यवस्थाभी देखनेमें आती है इसलिये देवद्रव्यकी तो अभी बहुत जरूरत है, परंतु जैसे श्वेत वस्त्र पहिरनेवाले साधुओंमें साधुधर्मकी बहुत गेरव्यवस्था होनेलगी तब उसको सुधारने के लिये पीले वस्त्र पहिरने शुरू करके साधुधर्म की अच्छी व्यवस्था चलाई. तैसेही जहां जहां पुराने ट्रस्टी लोग देवद्रव्यकी गेरव्यवस्था करते होवें, वहां वहां नवीन सभा, मंडल वगेरह संस्था स्थापनकरके देवद्रव्यकी अच्छी व्यवस्था होनेके उपाय करने चाहिये, प्रत्येक गांव, नगरादिकमें अपना २ सर्वसंघ इकट्ठा करके पुराने ट्रष्टीयों के पाससे देवद्रव्यका पूरा पूरा हिसाब लेना चाहिये तथा आगेके लिये वर्ष वर्षमें या दो दो वर्षमें देवद्रव्यकी सार संभाल रक्षा व उचित रीतिसे वृद्धि करने वाले नये नये ट्रष्टी बनाने चाहिये, दर वर्ष पर्युषणा पर्व ऊपर एक रोज सब संघ के समक्ष वर्ष भरके देवद्रव्यके जमा खर्च के हिसाब की तपास होना चाहिये, ४-५ आगेवानों की सलाहसे अगर देवद्रव्य व्याजे देना पडे तो आभूषणादि या मकानादि स्थापना रखे बिना किसीको अंगउधार दिया न जावे और वार्षिक खर्च के जितना या

आभूषण, जीर्णोद्धारादिक के लिये प्रयोजन जितना द्रव्य रखकर जितनी ज्यादे आवक होवे उतनी रकम दूसरे मंदिरोंमें जहां पूजा वगेरह की व्यवस्था न होवे वहां पूजा वगेरहकी व्यवस्था होनेके लिये या जीर्णो-द्धारादिक के लिये संभाल पूर्वक खर्च करनेमें आवे इत्यादि रीतिसर व्यवस्था होनेसे गेरव्यवस्था दूर होगी. भगवान्‌की भक्ति का, देवद्रव्यकी संभाल का बडा लाभ हरेकको मिलता रहेगा, दूसरे अपूज मंदिरोंमें पूजा होनेका व जीर्णोद्धार का महान् पुण्य होगा और पुराने ट्रष्टी लोगोंकी बादशाही सत्ता निकलजानेसे देवद्रव्यकी हानी होनेका प्रसंगभी नहीं आवेगा इसलिये अभी देवद्रव्यकी बहुत जरूरत है परंतु गेरव्यवस्था देखकर उसको सुधारने के बदले आवक का निषेध करना बडी भारी भूल है.

४७ अगर कहाजायाकि दुष्कालादिकमें स्वधर्मीलोगोंके काममें देव द्रव्य नहीं आसक्ता इसलिये देव द्रव्यकी वृद्धि करने की जरूरत नहीं है ऐसा कहना भी बडी अज्ञानता है, क्योंकि देखिये दुष्कालमें भूखे मरते प्राणियोंके ऊपर अनुकंपा उपकार बुद्धि होनेसे सहायतादेना महान् पुण्यका हेतु है. और वीतराग भगवान् को द्रव्यादि अर्पण करना अनु-कंपा उपकार बुद्धि से नहीं किंतु भक्ति रागसे एकंत निर्जरा के लिये मोक्ष प्राप्ति के हेतु भूतहै. इसलिये यथायोग्य दोनों कार्यों में अपनी शक्ति व भावना के अनुसार अपने घरका द्रव्य खर्च करना योग्य है. जैसे—गृहस्थ व्यवहारमें अपने भाई को दुःख पडे तब उनका कष्ट दूर करनेके लिये अपने द्रव्य से सहायता देने में आतीहै, परंतु अपने द्रव्य का लोभ दशासे बचाव करके दूसरेके द्रव्यसे सहायता देने की आशा रखना न्याय विरुद्ध होताहै. तैसेही—धर्म व्यवहार में भी दुष्कालादिक में पीडित अपने स्वधर्मी भाइयों का कष्ट दूर करने के लिये अपने घरके द्रव्यसे सहायता देना योग्य है. परन्तु अपने द्रव्य का लोभ दशासे बचाव करके दूसरे के द्रव्य से (देवद्रव्यसे) सहायता देने की आशा

रखना सर्वथा न्याय विरुद्ध है. और " **भक्खंतो जिन दव्वं अणंत संसारीओ भणिओ** " इत्यादि, अर्थात्-देव द्रव्यका भक्षण करनेवाला अनन्त संसारी होवे, ऐसा **श्राद्धविधि व आत्मप्रबोधादि** शास्त्रों में खुलासा कहाहै, देव द्रव्यका भक्षण करे, करावे, या करने वाले को सहायता देवे तो बडा दोष आताहै. देव द्रव्य की वृद्धि करना भगवान् की भक्ति से निर्जरा के लिये मोक्ष का हेतु है, और दुष्कालमें दुःखियों को सहायता देना उपकार बुद्धिसे पुण्य का हेतु है. इस बातका यदि मर्म समझ में आवे, तो. देव द्रव्यका दुष्कालमें उपयोग करवाने की कुतर्क कभी करने में न आवे इस बातका विशेष विचार पाठकगण आपही करसक्ते हैं.

४८ **ऊपर के लेखका सारांशः**—खास विजयधर्मसूरीजी एक जगह लिखते हैं कि मारवाड, मेवाडादि देशोंमें सैकडों जिन मंदिरों में जीर्णोद्धार की पूरी पूरी जरूरत है, उसमें देवद्रव्यकी सब रकम खर्च हो जावे तो भी सब मंदिरोंका पूरा पूरा जीर्णोद्धार नहीं होसके. जब ऐसी अवस्था है तो फिर देवद्रव्य बहुत होगया है अब देवद्रव्य बढाने की जरूरत नहीं है ऐसा लिखकर देवद्रव्यकी आवक को रोकना, जीर्णोद्धारादिक कार्यों में बाधा डालना, भगवान् की भक्ति में अन्तराय करना यह कितना बडा भारी अनर्थ है, इसका विचार करके विजयधर्मसूरिजीको अपनी इस भूलको अवश्यही सुधारना उचित है विशेष क्या लिखें.

५ देवद्रव्यकी वृद्धि करनेके लिये चढावे करनेके पाठ शास्त्रोंमें हैं या नहीं ?

देवद्रव्यकी वृद्धि करनेके लिये बोली बोलनेके चढावे करनेके पाठ कोई भी शास्त्र में नहीं है, ऐसा विजयधर्मसूरिजीका लिखना प्रत्यक्ष झूठ हैं, क्योंकि देवद्रव्यकी वृद्धि करने के लिये बोली बोलने के (चढावे करने के) पाठ बहुत शास्त्रों में प्रत्यक्ष ही देखने में आते हैं देखिये.

श्रीकुमारपाल प्रबंधमें देवद्रव्यकी वृद्धि करनेका पाठ नीचे मुजबहै.

४९ " **मालोद्घट्टनसमये** मिलितेषुं श्रीनृपादिसंघपतिषु मंत्री-वाग्भट इन्द्रमालामूल्ये लक्षचतुष्कमुवाच। तत्र च राजाऽष्टौ लक्षान्, मन्त्री षोडशलक्षीं, राजा द्वात्रिंशल्लक्षान, एवं स्पर्द्धया माला मूल्ये क्रियमाणे कश्चित्प्रछन्नदाता सपादकोटिं चकार। ततश्चमत्कृतो नृपः प्रोचे, दीयतां-माला विलोक्यते मुखकमलं पुण्यवतः, इति श्रुत्वा मधुमती वास्तव्य मन्त्रि हांसाधारु सुतो जगड श्राद्धः सामान्य मात्रवेषाकारः प्रकटीबभूव। तं दृष्ट्वा मान्त्रिणं प्राह–नृपो विस्मयाकुलमनाः मन्त्रिन्! द्रव्यं सुस्थं कृत्वा दीयातां माला। जगडोऽपि राजवाचान्तः कषायितः सपादकोटि मूल्यं रत्नं दत्त्वाह–श्रीपरमार्हत भूप! इदं तीर्थं सर्व साधारणं, अत्र च द्रव्य सुस्थमन्तरेण नहि कोऽपि वक्ति। ततस्तद्वचसा चमत्कृतो राजा तं श्राद्धं समालिङ्ग्य त्वं ममसंघे मुख्य सङ्घाधिपतिरिति सन्मानन्य मानं दत्वा मालामर्पितवान् तेनापि तीर्थभूता स्वमाता परिधापिता॥

लक्ष्मीवंतः परेऽप्यवं, बद्धस्पर्द्धाः शुभश्रियः। स्वयंवरणमाला-वन्मालां जगृहुरादरात्॥१॥ सर्वस्वेनापिको मालां, न गृह्णीयाज्जिनौकसि॥ इह लोकेपि यत्पुण्यै, स्फुरेदिन्द्रपदंनृणाम्॥ २॥ एवं कृतारात्रिकमङ्गलो-द्यत्प्रदीपपूजाद्यखिलोपचारः। जिनं नमस्कृत्य स कृत्यवेत्ता, प्रजागुरुः प्राञ्ज-लिरित्युवाच "॥ ३॥

५० ऊपरके पाठकासार यहीहै कि **कुमारपाल** राजाके संघ में शत्रुजय तीर्थ ऊपर श्रीहेमचन्द्रसूरिजी आदि प्रभावक गीतार्थ पूर्वाचार्योंके व सर्व संघकेसमक्ष कुमारपाल वगैरह संघपतियों के इकट्ठे हुए बाद तीर्थनाथ श्रीऋषभदेव स्वामी की भक्ति में देवद्रव्यकी वृद्धि के लिये इन्द्रमाला पहिरने संबंधी बोली बोलनेका चढावा होने लगा, जब पहिले वाग्भट मंत्री चार लाख रुपये बोले, तब राजाने आठ लाख बोले, फिर मंत्रीने १६ लाख बोले, राजा ३२ लाख बोले. इस प्रकार से इन्द्रमाला

का परस्पर स्पर्द्धा पूर्वक अर्थात् सामने २ उत्साह सहित चढावा होरहाथा इतनेमें एक गुप्त पुरुष ने इन्द्रमाला के चढावेके **सवा करोड** रुपये बोले, उसको सुनकर राजा आश्चर्यसे चमत्कार पाया हुआ बोला कि सवा करोड बोलने वालेको माला देओ उससे उस पुण्यवान् के दर्शन होवें, ऐसा सुनकर **महुवा** के रहने वाले **हांसाधारू मंत्री** के पुत्र सामान्य वेष धारण करने वाले **जगडु शाह** खडे हुए, उनकी गरीब स्थिति जैसा सामान्य वेष आकार देखकर राजाको शकपेदा हुआ इसलिये मंत्रीसे बोले कि पहिले द्रव्यकी व्यवस्था करके पीछे माला देना. ऐसा सुनकर जगडु शाह सब संघके समक्ष सवाकरोडके मूल्यवाला रत्नदेकर बोले, हे राजन् ! यह शत्रुजय तीर्थ सबके बराबर है इसलिये जिसकेपास द्रव्य होगा और जिसकी भावना होगी वोही यहांपर चढावा बोलेगा परन्तु द्रव्य की व्यवस्था बिना कोइभी चढावा नहीं बोलसकता. ऐसे जगडुशाह के बचन सुनकरके और उसीसमय सबके समक्ष सवाकरोड रुपियोंके मूल्य वाला रत्न देनेका देखकरके राजा बडे हर्ष सहित उनके साथ प्रेम भक्ति का आलिंगन पूर्वक बोले आप हमारे संघमें मुख्य संघपति हैं ऐसा आनंद युक्त सन्मान देकर इन्द्रमाला दी, तब उनने भी वह माला तीर्थभूत अपनी माताको पहिनाई.

और दूसरेभी धनवान लोग इसीप्रकार से परस्पर चढावे करके स्वयं वर माला की तरह इन्द्रमाला को आदर पूर्वक ग्रहण करनेलगे, शत्रुजय जैसी पवित्र तीर्थ भूमि में ऋषभदेव जैसे तीर्थनाथके मंदिरमें भगवान् को अपना सर्व द्रव्य अर्पण करके भी उस इन्द्रमाला को कौन ग्रहण न करे अर्थात्-सब कोई ग्रहण करे, जिसके पुण्य प्रभाव से इस लोकमें भी इन्द्रपदवी प्राप्त होती है । इसीतरह से अर्थात् जैसे इन्द्रमाला ओंके चढाये हुए वैसेही पूजा, आरती, मंगलदीपकादि कार्योंके भी चढावे होने पूर्वक तीर्थंकर भगवान् की द्रव्यपूजा किये बाद जिनेश्वर भगवान् को नमस्कार करके महाराजा कुमारपाल हाथ जोडकर भावपूजा वीतराग प्रभुकी स्तुति करने लगे.

५१ देखिये ऊपरके पाठमें देव द्रव्य की वृद्धि करने के लिये बोली बोलने का (चढावा करनेका) खुलासा पूर्वक पाठ है इसलिये देवद्रव्य की वृद्धि करनेके लिये चढावा करनेका पाठ किसीभी शास्त्रमें नहीं है ऐसा लिखना विजयधर्म सूरिजी का प्रत्यक्ष झूठ है.

५२ अगर कहा जाय कि ऊपरमें जो पाठ बतलाया है यह तो चरितानुवाद है, अर्थात्–कुमारपाल राजाके चरित्रमें कथन है, परन्तु विधिवाद में अर्थात् देव द्रव्य की वृद्धि के लिये चढावे बोलने ऐसा पाठ विधिवाद के शास्त्रोंमें नहीं है, ऐसा कहना भी सर्वथा अनुचित है, क्योंकि देखिये " **इदं तीर्थं सर्व साधारणं अत्र द्रव्य सुस्थमंतरेण नहि कोऽपि वक्ति** " इस वाक्य में जगडुशाह ने कुमारपाल महाराजा को सर्व संघके समक्ष साफ कहा है कि- यह शत्रुंजय तीर्थ सबके समान है, इसलिये जिसके पास द्रव्य देनेका योग होगा वोही यहांपर चढावा बोलेगा, बिना द्रव्य कोई चढावा नहीं बोलसक्ता, इस पाठसे यही साबित होताहै कि कुमारपाल महाराजा के पहिलेसे ही देवद्रव्य की वृद्धि करनेके लिये चढावा बोलनेकी विधि परंपरासे चलीआती थी और " **मालोद्‌घट्टन समये मिलितेषु श्रीनृपादि संघपतिषु मंत्री वाग्भट इन्द्रमाला मूल्ये लक्ष चतष्कमुवाच** " इस वाक्यमें भी इन्द्रमाला के चढावेके समये राजा कुमारपाल, अन्य संघपति, आगे वान् शेठिये और सर्व संघ इकठ्ठा होनेके बाद वाग्भट मंत्रीने इन्द्रमाला के चढावेके पहिली दफे ४ लाख रुपये बोले. इस पाठसे भी कुमारपाल महाराजाके पहिलेसे ही चढावे करने की विधिका रिवाज चलाआता था. ऐसा साबित होता है इसलिये इसबातको खास विजयधर्म सूरिजी के परममान्य **श्राद्धविधि** ग्रंथमें विधिवाद में कहा है, देखिये उसका पाठः–

५३ " **देवद्रव्य वृद्ध्यर्थं** प्रतिवर्षं मालोद्‌घट्टनं कार्यं, तत्र चैन्द्रयान्य वा माला प्रतिवर्षं यथाशक्तिग्राह्या, श्रीकुमारपाल संघे मालोद्‌घट्टन

समय मन्त्रिवाग्भटादिषु लक्षचतुष्कादि महूआ वासि सौराष्ट्रिक प्राग्वट हंसराज धारुपुत्रो जगडो मलिनाङ्गत्रस्त्रो सपाद कोटीं चक्रे"

५४ इसपाठ में देव द्रव्य की वृद्धि करनेके लिये दरवर्ष मालोद् घट्टन करनेका कहा है, अर्थात्-मालाओंके चढावे करके देव द्रव्यकी वृद्धि करनेका बतलाया है, उसमें इन्द्रमाला अथवा अन्यमाला दरवर्ष शक्तिके अनुसार श्रावक को अवश्य ही ग्रहण करनी चाहिये, **कुमारपाल** महाराजा के संघमें इन्द्रमाला के चढावे के समय पहिली मालाके चढावे के **सवा करोड** रुपये हुए थे, इसी तरह श्रावकों को इन्द्रमालादि के चढावे लेकर देव द्रव्य की वृद्धि करनी चाहिये.

५५ अब विवेक बुद्धि पूर्वक दीर्घ दृष्टि से विचार करना चाहिये कि **कुमारपाल** महाराजा के पहिले प्राचीन पूर्वाचार्यों के समय से ही चढावे करके देवद्रव्यकी वृद्धि करनेका रिवाज चला आता है, जिसको **श्राद्धविधि** ग्रंथ कारने विधि वादमें गिना है, इसलिये उसको चरितानुवाद कहकर निषेध करना योग्य नहीं है।

५६ इसी तरह से **उपदेश सप्तति**, तथा **चतुर्विंशति प्रबंध** वगैरह बहुत शास्त्रोंमें इस चढावे के रिवाजको **विधिवादमें** गिना है, इस लिये **चरितानुवाद** के नामसे निषेध कभी नहीं हो सक्ता।

५७ जैसे **ब्रह्मचर्य** का उपदेश करते हुए **विजय सेठ, विजया सेठानी स्थूलभद्र मुनि** महाराज वगैरह के दृष्टांत से ब्रह्मचर्य को विशेष पुष्ट करे, उसको चरितानुवाद कहकर निषेध करनेवाले को अज्ञानी समझना चाहिये. तैसे ही देवद्रव्यकी वृद्धि करनेका बतलाते हुए **कुमारपाल** महाराजा के संघमें इन्द्रमालाके दृष्टांत से देवद्रव्यकी वृद्धिकी बातको पुष्ट किया, उसको चरितानुवाद कहकर निषेध करनेवालेकोभी अज्ञानी समझना चाहिये. इसी तरहसे **भरत** चक्रवर्तीका संघ, **शत्रुंजय** तीर्थ के १६ उद्धार और **६३ शलाका पुरुषों** के पूर्वभव शुभ कर्तव्य वगैरह

हजारों बातें चरितानुवादकी मानते हैं तिसपरभी एक देवद्रव्यकी वृद्धिके चढावेको चरितानुवाद कहकर निषेध करना यह कितना बडा अन्याय है।

५८ विजयधर्मसूरिजी चढावे के रिवाज को गीतार्थ पूर्वाचार्यों की व संघकी आचरणा लिखते हैं, मानते हैं, तिसपर भी विधिवाद के प्रमाण मांगनेका आग्रह करके चरितानुवादके नामसे चढावेके रिवाजको निषेध करनेलगे, इसलिये मैंने विजयधर्मसूरिजीके परम पूज्य **श्राद्धविधि** ग्रंथकार के वाक्य से ही चढावे के रिवाज को विधिवादमें साबित करके बतलाया है, परंतु जब जिस बातमें पूर्वाचार्यों की आचरणा मान्य कर ली, तब उस बातमें विधिवादके या भाष्य, चूर्णि आदि आगमपञ्चाङ्गी के प्रमाणों को मांगनेका आग्रह करना न्याय विरुद्ध है, क्योंकि आचरणाकी बातमें तो इतिहास की दृष्टिसे प्राचीनता या लाभ ही देखा जाता है. देवद्रव्यकी वृद्धि के लिये चढावा करनेका रिवाज बहुत प्राचीन कालसे चला आता है, और जिन मंदिर व तीर्थ क्षेत्रोंकी रक्षा करनेवाला, शासनका आधारभूत, महान् लाभका हेतु है. इसलिये विधिवाद के नामसे या आगम पञ्चाङ्गी के नाम से निषेध करना भारी भूल है।

५९ औरभी देखो विधिवादकी क्रियातो भाव शुद्ध हो अथवा अशुद्ध हो कदाचित् मनके परिणाम बिगडजावें (मलीनहोंजावे) तो भी देवसी-राई प्रतिक्रमण, पडिलेहणा, रात्रि चौविहार, ब्रह्मचर्य पालन करना वगैरह क्रियाएं हमेशा नियमानुसार सर्व जगह पर अवश्यही करनेमें आती हैं, सो हमेशा नियमानुसार शुभक्रियाएँ करते करते परिणाम भी शुद्ध होजाते हैं और महान् लाभ मिलता है, परंतु परिणामों की मलीनतासे विधिवाद की क्रिया का व्यवहार भंगकरेंतो भगवान्की आज्ञाके विराधक होवें, बडा दोष आवे. इसलिये विधिवाद की क्रिया तो हमेशा करनेमें आती है और चरि-तानुवादकी क्रिया तो विधिवादकी तरह व्यवहारसे हमेशा करनेमें नहीं आती, किन्तु कभी कभी पर्व विशेष अवसर आवे और भाव शुद्धहोवें, चढते उल्लास

हो जावें, तब किसी किसी समय पर करनेमें आती है, उसी तरह पूजा-आरती-रथयात्रा-प्रतिष्ठादि कार्यों के चढावे विधिवादकी तरह सब जगहपर सब मंदिरों में और सब तीर्थ क्षेत्रोंमें हमेशा करनेका रिवाज नहीं है. परंतु पर्व विशेषमें या पूजा आरती आदि क्रिया करने वालों के भाव चढजावें, देवद्रव्यकी वृद्धि करनेका लाभ लेनेकी इच्छा होवे, पर्वदिनमें भगवान्की पहिली पूजा आरती आदि के लाभकी चाहना होवे, और प्रतिष्ठादि समय प्रतिमा स्थापन, ध्वजा आरोहण व कलश चढानेमें अपने द्रव्यपर से मोह छोडकरके भगवान् की भक्ति में अपना द्रव्य अर्पण करने का खास विचार होवे तब चढावा बोला जाता है, अन्यथा चढावा कभी बोला जाता नहीं. इसलिये विधिवाद के व चरितानुवाद के भावार्थ को समझे बिना और लाभालाभ का विचार किये बिनाही आरती, पूजा वगैरह के चढावों को विधिवाद के नामसे या आगम पंचांगी के नामसे निषेध करके भगवान् की पूजा--आरती वगैरहसे देव द्रव्य की वृद्धि करने का अंतराय करना आत्मार्थियों को योग्य नहीं है ।

६० उत्तम पुरुषों के चारित्रों में दान, शील, तप, तीर्थ यात्रा, संघ भक्ति, जिनपूजा, शासन प्रभावना, परोपकार, गुरु सेवा, देवद्रव्य की वृद्धि, जीर्णोद्धार, अमारी घोषणा वगैरह शुभ कार्योंका उल्लेख होवे वो सब अनुमोदनीय और आत्म हितके लिये अपनी शक्तिके अनुसार अनुकरणीय याने अंगीकार करने योग्य होते हैं, जैसे **श्रेयांस कुमार** आदि के दान, **विजय सेठ, विजयासेठाणी आदिकके** शील, **द्रढपरिहारी** वगैरहके तप इत्यादि उत्कृष्ट शुभ कार्य बारंबार अनुमोदनीय, शक्तिके अनुसार अनुसरणीय हैं. तैसे ही **कुमारपाल** महाराजा के चरित्रके ऊपरसे **१८ देशमें अमारी पडह**, देव गुरु की उत्कृष्ट सेवा, छ री पालते हुए तीर्थ यात्रा जाना, संघ भक्तिकरना, दीनोद्धार करना और परमार्हत् विशेषण, देवद्रव्य की वृद्धि वगैरह कार्य बारंबार अनुमोदनीय और शक्तिके अनुसार

अनुसरणीय हैं. इसलिये इन महान् उत्तम पुरुषोंने चढावा करके जो देव द्रव्य की वृद्धि की थी उस शुभ कार्यको अभी यथा शक्ति अंगीकार करने योग्य है, जिसको चरितानुवाद के नामसे निषेध करना सर्वथा अनुचित है. देखो— अगर चरितानुवाद के नामसे शुभ कार्य भी निषेध करने में आवें तो हजारों महान् पुरुषों की अवज्ञा होनेसे और धर्म कथानुयोग उत्थापन करने से **उत्सूत्र प्ररूपणा** का बडा भारी दोष आवे. इसलिये चरितानुवादके शुभ कार्य शक्ति के अनुसार अंगीकार करने योग्य हैं. परंतु निषेध करने योग्य नहीं हैं. ।

६१ अगर कोई कहे कि **कुमारपाल** महाराजा के पहिले भी बहुत संघ पति हुए हैं, परंतु देव द्रव्यकी वृद्धि करने के लिये चढावा करनेका कोई प्राचीन उल्लेख देखने में नहीं आता, इसलिये चढावा करने का रिवाज नवीन मालूम होता है, ऐसा कहना भी उचित नहीं है. क्योंकि देखो **जगडु शाह** के वचनसे ही चढावा प्राचीन साबित होता है यह बात ऊपर की ५२ वीं कलम में खुलासा लिख चुके हैं, इसलिये चढावे के रिवाज को नवीन कहना योग्य नहीं है और भी देखो जो बात सामान्य होती है वह नहीं लिखी जाती परंतु जो बात विशेष होती है वही लिखने में आती है । पहिले के संघपतियों में चढावे की बात सामान्य होगी इसलिये नहीं लिखी गई होगी. जैसे अभी आरती, पूजा, रथयात्रा, वगैरह के चढावे प्रायः सभी संघपति यथा शक्ति अवश्यही लेते हैं, तो भी सामान्य बात होनेसे उनका उल्लेख नहीं किया जाता. देखिये— श्रीवीरप्रभूके शासनमें बडे बडे प्रभावक बहुत आचार्य होगये हैं तो भी सामान्य बात होने से सब पूर्वाचार्यों के विस्तार पूर्वक उल्लेख नहीं किये गये परंतु **हेमचन्द्राचार्य** महाराजने **३॥ करोड** श्लोक प्रमाणें ग्रंथोकी रचना करी और **कुमारपाल** महाराजा को जैन धर्म का प्रतिबोध दिया तब **कुमारपाल** महाराजाने अपने **१८ देश** के राज्य में अमारी घोषणा करवाई, कोई भी पशु पक्षी की हिंसा

होने पावे नहीं. और दूसरे भी बडे राजाओं को व बादशाहों को उपदेश से, धनसे, या किसी प्रकारसे भी समझाकर उन्हों के राज्य में भी जीवदया की घोषना करवाई, बहुत विशेष कार्य किये इसलिये उनके चरित्र में उनबातों का उल्लेख किया गया है. **श्रेणिक, कौणिक, संप्रति, वीरविक्रमादित्य** वगैरह बहुतसे जैनधर्मी राजा महाराजाओंने जीवदया अपने अपने राज्य में अवश्य ही पलाईथी, परंतु सामान्य बात होने से उन्होंके चरित्रों में नहीं लिखी गई. जिसपर कोई कहे कि **श्रेणिकादि** राजा महाराजाओं के चरित्रों में जीवदया पलानेका नहीं लिखा, इसलिये उन्होंने अमारी घोषणा नहीं करवाई थी, तो ऐसा कहने वाले को अज्ञानी समझना चाहिये. क्योंकि कदाचित् उन राजा महाराजाओंके व्रत पच्चक्खाण करने का योग होवे या चारित्र मोहनीय अंतराय कर्म के योग से नहीं भी होवे तो भी जिनेश्वर भगवान् के भक्त होने से अपनी अपनी यथा शक्ति जीवदया की घोषणा अपने २ राज्यमें अवश्यही करवाते थे इसलिये उन्होंके चरित्रोंमें अमारी घोषणा का उल्लेख नहीं किया गया होवे तो भी अवश्य ही समझना चाहिये. तैसेही पहिले के संघ पतियोंने चढावे करके देवद्रव्यकी वृद्धि अवश्य ही की होगी परंतु सामान्य बात होने से उन्होंके चरित्रों में उसका उल्लेख नहीं किया गया और **कुमारपाल** महाराजा १२ व्रतधारी दृढ श्रावक हुए, छ री पालते हुए बडा भारी संघ निकाला, उत्कृष्ट भक्तिवाले हुए, सवा करोड रुपयों की जगह पांच करोड रुपयों का चढावा लेने को शक्तिमान थे, तो भी गरीब जैसे सामान्य वेश आकार वाले एक पुरुषने चढावे की बोलिका सवा करोड देने की अभिलाषा जाहीर की तब उनके भावदेखकर उनकीइच्छा पूर्णकरनेकेलिये **कुमारपाल** महाराजाने मालाउनकोदिलवाई. यह विशेषभक्ति की सूचना करानेवाला उत्कृष्टकार्य होनेसे उनका उल्लेख किया है, जिसका भावार्थसमझे बिनाही पहिलेके संघ पतियोंने चढावाकरके देवद्रव्यकीवृद्धि नहींकी ऐसाकहना बडी भूल है।

६२ और भी देखिये— जैसे **आनंद, कामदेवादि** श्रावक १२ व्रतधारी गुरुभक्त थे इसलिये **अन्न-वस्त्रादि** गुरुमहाराज को वहोराते थे, तो भी सामान्य बात होनेसे उन्होंने अमुक मुनिको, अमुक वस्तुका, अमुक समय दान दिया था, ऐसा नहीं लिखा है. उसका मर्म भेद समझे बिना कोई कहे कि **आनन्द-कामदेवादि** श्रावकोंनें गुरुमहाराजको आहारादि वहोराये नहीं, अगर वहोराये होवें तो उसका लेख बतावो, ऐसा कहने वालेको अज्ञानी समझना चाहिये. तैसेही **कुमारपाल** महाराजा के पहिले के बहुत संघ पतियोंने चढावे करके देवद्रव्यकी वृद्धि अवश्य ही की होगी. परंतु सामान्य बात होनेसे नहीं लिखीगई, उसका मर्म भेद को समझे बिना कोई कहे कि पहिले के संघ पतियोंने चढावा नहीं किया था अगर किया होवे तो उसका लेख बतावो, ऐसा कहने वालेको अज्ञानी समझना चाहिये। देखिये पहिले के संघ पतियोंने अपने संघमें अमुक मुनिमहाराज को आहार वस्त्रादि दान दिया था ऐसा भी नहीं लिखा है, तो क्या पहिले के संघपति अपने संघ के साथमें जो जो आचार्य उपाध्याय व मुनिमहाराज और साध्वी जी होवें उन्हों को आहारादि नहीं वहोराते थे, ऐसा कभी नहीं होसक्ता, किन्तु यथा अवसर अवश्यही आहारादि से भक्ति करते थे, तो भी सामान्य बात होनेसे उन्हों के चरित्रों में मुनि दान का नहीं लिखा गया, तो भी अवश्य ही समझना चाहिये. तैसे ही पहिले के संघ पतियों के चरित्रों में चढावा करने का नहीं लिखा तो भी तीर्थ की भक्ति और देवद्रव्यकी वृद्धि करने के लिये चढावे करने का अवश्य ही समझना चाहिये परंतु सामान्य विशेष बात के भेदको समझे बिनाही निषेध करना योग्य नहीं है.

६३ अगर कहाजाय कि पहिले संघपति चक्रवर्ती **भरत** महाराजाने **शत्रुंजय** और **अष्टापद** तीर्थ के ऊपर चढावा नहीं किया इसलिये अभी चढावा करना योग्य नहीं है, ऐसा कहना भी सर्वथा बे समझ है, क्योंकि उस समय **भरत चक्रवर्तीने** सब जगह नवीन जिनमंदिर बनवाये

थे, स्वर्ण हीरा, माणिक, मोती आदि के मुकुटादि आभूषण भी अपनी तरफ से चढाये थे और जितना द्रव्य खर्च करने की जरूरत पडती थी उतना द्रव्य अपनी तरफसे खर्च करते थे तथा उस समयके सब श्रावक लोग भी भक्तिवश पूजा आरती वगैरह की सब सामग्री अपने २ घरसे मंदिरमें प्रभूकी पूजा के लिये ले जाते थे. और प्रभू की मूर्ति का प्रमार्जन, प्रक्षालन, पूजन आदि सब तरह की सेवा भक्ति अपने अपने हाथोसें ही करते थे इसलिये उस समय जीर्णोद्धारादि कार्यों के लिये स्थाई देव द्रव्य रखने की विशेष कोई भी जरूरत पडती नही थी अथवा मंदिर बनवाने वाले मंदिर संबंधी सेवा पूजा सार संभाल जीर्णोद्धारादिक सब तरहका खर्च अपनी अपनी तरफसे चलाते थे इसलिये देवद्रव्य की विशेष जरूरत नहीं पडती थी अथवा आगेवान् धनीक (द्रव्यवान्) श्रावक अपने नगरके और आसपासके सब मंदिरोंके खर्चेकी सब तरहकी व्यवस्था अपनी २ तरफसे चलाते थे इसलिये भी उस समय देवद्रव्यकी अभीके जैसी वृद्धि करने की व भंडारादिक में जमा रखनेकी विषेश कोईभी आवश्यकता नहींपडती थी, परंतु जो पूजामें चढाया जाताथा उस देवद्रव्य की मर्यादा से नवीन मंदिर बनाने वगैरहमें व्यवस्था होती थी. इसलिये उस समय चढावा करके देव द्रव्य की वृद्धि करने की कोई भी आवश्यकता नहीं थी. **बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती, विद्याधर** जैसे समर्थ जैनी राजा महाराजा और आगेवान् धनीक श्रावक होते रहते थे तबतक तो परंपरा से ऐसी ही व्यवस्था चली आती थी परंतु जबसे परंपरासे जैनी राजा महाराजाओं का अभाव होने लगा और श्रावक लोग भी प्रमादी होकर सेवा पूजाके लिये पूजारी वगैरह नोकर रखने लगे, तबसे पूजा व जीर्णोद्धारादि कार्यों के लिये विषेश स्थाई देवद्रव्य रखने की व्यवस्था होने लगी तब ग्रामादिक की जागीर, व्यापार के नफेका विभाग व चढावा वगैरहसे देव द्रव्य की विशेष वृद्धि होने का शुरू हुआ है इसलिये **भरत**

चक्रवर्ती के समय की बात कह कर अभी परंपरासे जैनी राजा महाराजाओं के अभाव में इस पडते कालमें चढावेसे देवद्रव्य की वृद्धि करने का निषेध करना बडी भूल है.

६४ इसी तरहसे **जिनराजके** जन्मादि कल्याणकोमें ६४ इंद्रादि **मेरु पर्वत** के ऊपर स्नात्र महोत्सव और **नंदीश्वर** द्वीपमें **अट्ठाई महोत्सव** करते हैं, परंतु वहां अनादि मर्यादा मुजब यथा योग्य क्रमसे सब कार्य होते हैं, और शाश्वत चैत्यों में जीर्णोद्धारादिक कार्यों के लिये द्रव्य की कुछ भी जरूरत नहीं पडती व अनादि मर्यादा विरुद्ध आगे पीछे कुछ भी कार्य कोई भी नहीं कर सक्ता इसलिये वहां देव द्रव्य की वृद्धि की जरूरत न होने से चढावा नहीं होता और यहां परतो अभी परंपरागत जैनी राजाओंके अभावसे जीर्णोद्धारादि कार्यों के लिये द्रव्य की बहुतही जरूरत पडती है और यहां के जिन मंदिरों में सेवा भक्ति का कार्य पहिले या पीछे कोई भी पुरुष कर सक्ता है इसलिये चढावें करके देव द्रव्य की वृद्धि करनेमें आती है उसके भेदको समझे बिनाही अनादि मर्यादा से शाश्वत चैत्यों में चढावा न होने का कह कर अभी इस जगह के मंदिरों में भी जीर्णोद्धारादि कार्यों के लिये देव द्रव्य की वृद्धि करने के लिये चढावा करने का निषेध करना प्रत्यक्ष ही बे समझी है।

६५ कई लोग कहते हैं कि देवद्रव्य इकठा करने का रिवाज चैत्य वासियोंने चलाया है परंतु शास्त्रीय प्राचीन रिवाज नहीं है, ऐसा कहने वालोंका प्रत्यक्ष ही झूठहै. क्योंकि देखो जैसे अभी यतिलोग शिथिलाचारी होकरके अनेक तरहसे अपने आचरण में अशुद्ध परिवर्तन करते हैं परंतु उन्हों के सामने क्रियापात्र संयमी संवेगी साधुओंका समुदाय मौजूद होने से शासन की मर्यादा में कुछ भी फेरफार नहीं कर सक्ते हैं. और देव द्रव्य की सार संभाल करना संयमी साधुओंका काम नहीं है किन्तु श्रावकों का काम है, तो भी कोई कोई यति लोग अभी देव द्रव्य की सार संभाल

करते हैं. वैसेही कई साधु लोग पहिले चैत्यवासी शिथिलाचारी होकरके अपने स्वार्थके लिये अपने संयम धर्मके विरुद्ध अनेक तरहके अनुचित आचरण करते थे परंतु उस समयभी उन्होंके सामने शुद्ध संयमी मुनियोंका समुदाय मौजूद था इसलिये शासनकी मर्यादामें फेरफार नहीं करसक्ते थे. देवद्रव्यका रिवाज पहिलेसेही चला आता था उसकी सार संभाल श्रावक लोग करते थे उसके बदले चैत्यवासी लोग करने लगे थे उसमें देव द्रव्यका उपयोग अपने स्वार्थके लिये भी करने लग गये थे, परंतु देवद्रव्य इकठ्ठा करने का नवीन रिवाज चैत्यवासियोंने नहीं चलाया था, किंतु प्राचीन ही है. इसलिये चैत्यवासियोंने देवद्रव्य इकठ्ठा करने का नवीन रिवाज चलाया है, ऐसा कहकर अभी देवद्रव्यकी वृद्धि करनेका जो निषेध करते हैं उन्होंकी बडी अज्ञानता है.

६६ औरभी देखो विचार करो–चैत्यवासी लोग मंदिरों में रहने लगे १, भगवान्‌की मूर्ति की द्रव्यपूजा अपने हाथों से करने लगे २, देवद्रव्य खाने लगे ३, मंदिर व पौषधशाला आदिक आपही बनाने लगे ४, बाडी बगीचा मकान क्षेत्रादि रखने लगे ५, सोना चांदी आदि परिग्रह द्रव्य रखने लगे ६, ज्योतिष-निमित्त-यंत्र-मंत्र-तंत्रादिसे अपनी आजीविका चलाने लगे ७, बहुत मुल्यवाले अच्छे अच्छे वस्त्र पहिरने लगे ८, रुई वगैरहके गादी-तकिया आदि आसन व पथारी रखने लगे ९, सचित जल; फल; तांबुलादिक खाने लगे १०, हमेशा गरिष्ट पुष्ट विगयवाला आहार पकवानादि वार वार खाने लगे ११, मंदिरोमें भक्तिके नामसे रात्रिको जाने व स्त्री पुरुषों को इकठ्ठे करने लगे १२, जिनराजकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा व स्नात्र महोत्सवादि कार्योंको मंदिरों में रात्रिको करने लगे १३, अपने अपने गच्छ के नामसे बाडा बंधी करके ब्राह्मणोंकी तरह यजमान वृत्ति करने लगे १४, अपने भक्तोंको अन्य शुद्ध संयमी मुनियोंके पासमें सत्यधर्म श्रवण करनेको जाने का निषेध करने लगे १५, अधिक महीने के ३० दिवसोंको पर्युषणादि

धर्म के कार्यों में गिनती करने का निषेध करने लगे १६, श्रीवीरप्रभू के दूसरे च्यवनरूप (गर्भापहार) कल्याणका निषेध करने लगे १७, तीर्थोंके पंडोंकी तरह अपने अपने गच्छके मंदिरोंकी आमदनी खाने लगे, इत्यादि अनेक तरहके चैत्यवासियोंके अ... ...योंका खंडन करते हुए श्री**हरि**-भद्रसूरिजीमहाराज **संबोधप्रकरणादि**में, तथा श्री**जिनवल्लभसूरिजी**महाराज **धर्मशिक्षा** व **संघपट्टकादि**में और श्री**जिनदत्त**सूरिजीमहाराज **गणधर सार्द्ध शतक, चैत्यवंदन कुलक, संदेह दोलावल्यादि**में विस्तारपूर्वक लिख गयेहैं. ऐसे चैत्यवासियोंको पेटभराउ साध्वाभासोंका टोलाकहा है परन्तु संयमी नहीं माने हैं तथा देवद्रव्य के भक्षण करनेवालेंको अनंत संसार वृद्धिका महान् पाप बतलाया है और उचित रीतिसे भावसहित देव द्रव्यकी सार, संभाल, रक्षा व वृद्धि करके भगवान्की भक्ति करनेवालोंको अल्प संसारी होकर यावत् तीर्थंकर गौत्र बांधनेका बडा लाभ बतलाया है, इस बातके ऊपरसे साबित होता है कि—यदि चैत्यवासियोंने देवद्रव्य इकट्ठा करनेका नवीन रिवाज चलाया होता तो श्रीमान् हरिभद्रसूरिजी आदि उक्त महाराज चैत्यवासियों की उपर मुजब अनेक अनुचित बातोंकी तरह देव द्रव्य इकट्ठा करनेकी बातका भी अवश्यही निषेध करते. जैसे—जैनशासन में अभी चार सौ वर्ष हुए, पुस्तक लिखनेवाले लुंकेलहियेने जिनप्रतिमा को वंदन-पूजन करनेके उत्थापन करनेका अपना नवीन मत निकाला और उसकी परंपरावालोंने ढाईसौ वर्ष हुए दिनभर मुंहके ऊपर मुहपत्ति बांध कर ढूंढियोंके नामसे नवीन रिवाज चलाया तो उनोंके सामने शुद्ध संयमी मुनियोंने आगमोंके प्रमाणों से उन्होंके झूठे कल्पित मतका खूब खंडन किया और जिनेश्वर भगवान्की प्रतिमाको साक्षात् श्रीजिनेश्वर भगवान्के समान मान्य करके उनको वंदन-पूजन करनेकी अनादि मर्यादा साबित करके बतलाई है. तथा दिनभर मुंहपत्तिको मुंहके ऊपर बंधी हुई रखना कुलिंगरूप शास्त्रविरुद्ध सिद्ध करके बतलाया और बोलनेकी वख्त उप-

योगसे मुंह के आगे मुंहपत्ति रखकर यत्नापूर्वक बोलने का आगमानुसार साबित करके बतलाया है. और उन्हीं ढूंढियों के अंदर से भीखम नामक ढूंढियेने दया--दान उत्थापनकरके तेरहापंथ अलग निकाला तो उनके खंडन के लिये जैन मुनियोंने सर्व जीवोंके ऊपर अनुकंपा करके यथाशक्ति दुःख से छोडानेरूप दया करनेका और दीन हीन दुःखी प्राणियोंको यथा योग्य दान देनेका खास श्रावक का कर्तव्य है उससे परोपकारका पुण्य व जैनशासन की शोभा है ऐसा खास आगमों के प्रमाणोंसे साबित करके बतलाया है. वैसेही यदि देवद्रव्य इकट्ठा करनेका रिवाज नवीन चलाया होता तो पूर्वाचार्य उसका अवश्यही निषेध करते परंतु किसी जगह निषेध नहीं किया, किन्तु चैत्यवासी लोग देवद्रव्यका भक्षण करनेलगेथे उसकाही निषेध करके श्रावकों के लिये उचित रीति से उसकी वृद्धि करने का बतलाया है इसलिये देव द्रव्य शास्त्रोक्त और प्राचीन ही साबित होता है उसको चैत्यवासियोंका नाम आगे करके अभी निषेध करना बडी भूल है.

६७ इसी तरहसे कई लोग चैत्यवासियोंने जैनशासनमें मूर्तिकी पूजा शुरू करनेका कहकर अभी श्रावकोंके लिये भी श्री **जिनराज**की मूर्तिकी द्रव्य पूजा करनेका निषेध करते हैं उन्होंकी बडी भूल है. क्योंकि देखो श्री**भगवती, जीवाभिगम, ज्ञाताजी, जंबूद्वीपपन्नत्ति, स्थानांगा**दि अनेक मूल आगमोंके प्रमाणोंसे यह बात अच्छी तरहसे साबित होती है कि जैसे **नंदीश्वरद्वीप, मेरुपर्वत,** वगैरह में और देवलोकादि शाश्वत स्थानों में **शाश्वत-चैत्य** [सिद्धायतन-जिन मंदिर] हैं, वैसेही भरतादि क्षेत्रोंमें नगरी आदि अशाश्वतस्थानोंमें **अशाश्वत चैत्य** [जिन मंदिर] भी अनादिसे चले आते हैं और **महानिशीथादि** आगमोंके प्रमाणों से यह बात भी अच्छी तरहसे साबित होती है कि अनंती उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालके पहलेके हुंडाअवसर्पिणी कालके पंचमआरेके पडते कालमें कई साधु लोग शिथिलाचारी होकर चैत्यवासी होगये थे वो लोग चैत्यों [जिन मंदिरों] में अनेक

तरहकी अविधि करने लगे थे और संयमी कहलाते हुएभी अपनी तरफसे चैत्यादि बनानेका आरंभ समारंभ करने लग गये थे उन्होंके शिथिलाचारों को (अविधि मार्ग को, चैत्यादि बनाने के आरंभ समारंभ को) निषेध करके श्रावकों के लिये चैत्यादि बनाने का व उपयोग पूर्वक विधि सहित भावसे द्रव्य पूजा करने का विधि मार्ग बतलाया गया था. तैसे ही अभी इस हुंडाअवसर्पिणी के पंचम काल में भी बहुत साधु लोग शिथिलाचारी होकर चैत्यवासी होगये और चैत्यों में रात्रिको प्रतिष्ठा-स्नात्र महोत्सवादि करने वगैरह अनेक तरहकी अविधि करने लग गये थे उसका निषेध करके श्रावकोंके लिये विधिपूर्वक जिनराजकी मूर्तिकी पूजा करनेका बतलाया गया है. जैन शासनमें भक्तिवाले श्रावकोंके लिये अनादि कालसे जिनेश्वर भगवान्‌की मूर्ति की द्रव्य पूजा करने की मर्यादा चली आती है, किन्तु चैत्यवासियोंने नवीन शुरू नहीं की है. संयमी कहलाते हुए भी चैत्योंमें द्रव्य पूजा स्वयं करने लगे थे, उसीकाही निषेध करने में आया है. परन्तु श्रावकोंके लिये निषेध नहीं किया गया है, इस बातका भेद समझे बिनाही जो लोग चैत्यवासियोंने जिनराज की मूर्तिकी पूजा शुरू करने का नवीन रिवाज चलाने का कहकर पहिले जिनराजकी मूर्तिकी पूजाका अभाव बतलाते हैं, उन्होंकी बडी अज्ञानता है. इस बात का विशेष खुलासा " जिन प्रतिमा को वंदन-पूजन करने की अनादि सिद्धि " नामक आगेके लेखसे पाठकगण आपही समझ लेवेंगे.

ॐ णमो जिणाणं.

जाहिर खबर.

श्री जिनप्रतिमाको वंदन-पूजन करनेकी अनादि सिद्धि.

इस ग्रंथमें चैत्य शब्दसे **भगवती-ठाणांग-समावायांग-ज्ञाताजी** आदि मूल आगमोंके पाठानुसार मंदिर-मूर्त्ति अनादि सिद्ध किया है, जैन शासनमें साधु-साध्वी-देव-देवी और श्रावक-श्राविकाएँ अनादि कालसे जिन प्रतिमाको यथायोग्य वंदन-पूजन करते आये हैं, आगे करते रहेंगे, यह विधिवादका अनादि नियम है परंतु **वीर** प्रभुके निर्वाण बाद बोद्धोंकी देखादेखी से या बारह वर्षी दुष्काल में नवीन शुरू नहीं हुआ है. और जैसे शक्करके हाथी, घोडे, गाय, गधे वगैरह खिलौनें बनते हैं; वो सब अजीव हैं, तो भी उनका नाम लेकर खावे तो हाथी, घोडे, गायकी हिंसाका पाप लगता है, तथा पत्थरकी गायको गाय मारनेके भाव करके मारे तो गाय मारनेकी हत्या लगे और अपनी माता-बहिन व स्त्रीकी इज्जत लेनेवाला दुष्ट शत्रुका फोटो देखनेसे या उसका नाम सुननेसे आदमी को रोम रोम में कषाय व्याप्त होकर राग द्वेषसे तीव्र कर्मोंका बंध होता है. तैसेही जिन मंदिरमें जिनेश्वर भगवान् की मूर्तिको देखनेसे जिनेश्वर भगवान्के अनंत गुण याद आते हैं; उससे भक्त जनोंके रोम रोममें भक्तिभाव व्याप्त होकर जिनेश्वर भगवान् के गुणोंका स्मरण करनेसे अनंत कर्मोंका नाश होता है. और भाव सहित पूजा करनेसे भगवान्की पूजा का महान् लाभ मिलता है, इत्यादि अनेक युक्तियों के साथ इस विषय संबंधी बेचरदास की और ढूंढिये-तेरहापंथियों की सब शंकाओंका सर्व कुयुक्तियोंका समाधान सहित अच्छीतरहसे खुलासा लिखनेमें आया है, यह ग्रंथ भी सबको भेट मिलता है.

जाहिर खबर.

इन्दौर शहर में मुंहपत्ति की चर्चा, ढूंढियों की हार और आगमानुसार मुहपत्तिका निर्णय.

इस ग्रंथमेंभी जैनशासन में साधुको बोलनेका काम पडे तब मुंह आगे मुहपत्ति रखकर यत्नपूर्वक उपयोगसे बोलनेका कहा है. इस अनादि जिनाज्ञा को उल्लंघन करके ढूंढियें साधुओंने बिना बोले भी हमेशा मुंहपत्ति मुंहपर बांधनेका नवीनमत निकाला है, तो भी अपने झूठे पक्षको स्थापन करने के लिये शास्त्रपाठोंके खोटे खोटे अर्थ करके कुयुक्तियें लगाकर किताबें छपवाते हैं, उन्मार्ग को पुष्ट करते हैं, उन सब ढूंढियोंकी सब शंकाओंका सब कुयुक्तियोंका समाधान सहित " **आगमानुसार मुहपत्तिका निर्णय** " लिखा है. और ढूंढिये लोग चर्चा करनेके लिये विवाद खडा करते हैं परंतु उनका पक्ष झूठा होनेसे न्यायानुसार सत्य शास्त्रार्थ कर सकते नहीं, अपना झूठा पक्ष छोडकर सत्यबात अंगीकार भी करते नहीं और अपनी हारकी झूठी इज्जत रखने के लिये चर्चा का विषय छोडकर विषयांतरसे आडी टेढी दूसरी दूसरी बातें बीच में लाते हैं, तीव्र कषायमें आकर रागद्वेष को बढानेके लिये अंगत निंदा ईर्षा से झगडा मचाते हैं, फिर भगजाते हैं. उसका ताजा बनाव इन्दौर शहर में मुंहपत्तिकी चर्चाका हाल इस ग्रंथकी आदि में छपवाया है, उसके देखनेसे ढूंढियोंको अपने झूठे पक्षका कितना आग्रह है इस बातका अच्छी तरहसे अनुभव होता है, यह ग्रंथ भी भेटमें ही मिलता है.

इन के सिवाय अन्य ग्रंथ भी प्रश्नोत्तर मंजरी १-२-३ भाग, प्रश्नोत्तर विचार, लघुपर्युषणा निर्णय प्रथमअंक, गौतम पृच्छाका सार, और पर्युषणा बाबत मुंबईकी चर्चा वगैरह देवद्रव्य निर्णय के प्रकाशकों के ठिकानेसे भेट मिलते हैं.